सात्त्विक जीवन ग्रन्थमाला

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

ॐ

—यह ग्रन्थ समर्पित है—

गीता के एकेश्वर, वेदों के प्रणव, ब्रह्म के प्रतीक,
गुरु नानक के सतनाम एक ओंकार, बाईबिल
के शब्द, शक्ति के रहस्यमय शब्द, विश्व
की प्रत्येक वस्तु के आदि स्रोत और
सहायक तथा अमरता के प्रदायक
ॐ की सेवा में

ॐ

प्रकाशक का वक्तव्य

आज अध्यात्म-प्रेमी पाठकों के पाणि-पल्लवों में "ओश्म् प्रणव रहस्य" समर्पित करते हुए मेरा हृदय परम प्रफुल्लित है। पुस्तक कैसी है; इसके विषय में मैं स्वयं कुछ नहीं कहना चाहता, इसका भार मैं अपने प्रेमी पाठकों एवं सहृदय समालोचकों पर छोड़ता हूं। आज हिन्दी भाषा के मन्दिर में ओश्म् 'प्रणव रहस्य' का छोटा-सा दीपक लेकर उपस्थित हुआ हूं; यदि यह नन्हासा दीपक किसी के अन्धकारावच्छन्न हृदय को जगमगा सके, तो मैं अपना प्रयास सार्थक समझूंगा। यह दीपक यद्यपि छोटा है; परन्तु इसका प्रकाश विस्तृत है; क्यों कि यह एक महान् योगिराज (श्री स्वामी शिवानन्द जी सरस्वती) की रचना है, जिसका जीवन साधना और तपश्चर्या की भट्ठी में जल कर परम पावन हो चुका है। अन्त में मैं श्री स्वामी शिवानन्दजी सरस्वती को हृदय की परम प्रशस्त, मृदुल भावनाओं के साथ हार्दिक धन्यवाद देता हूं, जिन्होंने अपने सभी प्रकाशनों को प्रकाशित करने की हमें सहर्ष अनुमति प्रदान की है। इस पुस्तकका अनुवाद श्री स्वामीजीके श्रद्धावान् शिष्य श्री स्वामी स्वरूपानन्दजी जिन्होंने नित्य स्वामीजीके निरन्तर संपर्कमें रहकर ब्रह्मविद्याका अध्ययन किया है और जो उनकी कृतियोंके वास्तविक महत्त्व और गाम्भीर्यको समझते हैं ने किया है, एतदर्थ मैं उनको धन्यवाद देता हूं।

रुलियाराम गुप्त

ओउम् की प्रार्थना

ओङ्कारं बिन्दु संयुक्तं
नित्यं ध्यायन्ति योगिनः
कामदं मोक्षदं चैव
ओङ्काराय नमो नमः

अर्थ—योगिजन, अनुस्वारसे युक्त ओंकार का सदा ध्यान करते हैं। यह ओंकार सब इच्छाओं की पूर्ति करनेवाला और मोक्षका दाता है। हम सब इस ओंकार के प्रति नमस्कार करते हैं।

श्री व्यासभगवान् नमोऽस्तु ते, जय विष्णु अवतार नमोऽस्तु ते
श्री बादरायर्ण नमोऽस्तु ते, जय कृष्णद्वैपायन नमोऽस्तु ते
श्री शंकराचार्य नमोऽस्तु ते, जय जगद्गुरु नमोऽस्तु ते
अद्वैताचार्य नमोऽस्तु ते, जय शंकर अवतार नमोऽस्तु ते
श्री दत्तात्रेय नमोऽस्तु ते, जय श्री अवधूत गुरु नमोऽस्तु ते
श्री गुरु देवदत्त नमोऽस्तु ते, जय त्रिमूर्त्ति अवतार नमोऽस्तु ते

गुरुशरणम्

श्री नटेश शरणं, शरणं श्री वेंकटेश

श्री शंकराचार्य शरणं, शरणं श्री व्यास भगवान

श्री दत्तात्रेय शरणं श्री राधेकृष्ण

श्री सीताराम शरणं, शरणं श्री हनुमन्त

गुरुप्रार्थना

श्री व्यास भगवान् व्यास भगवान्, व्यास भगवान् पाहि माम्

श्री बादरायण, बादरायण, बादरायण, रक्ष माम्

श्री शंकराचार्य, शंकराचार्य, शंकराचार्य पाहि माम्

श्री वेदान्त गुरु, वेदान्त गुरु, वेदान्तगुरु रक्ष माम्

श्री दत्तात्रेय, दत्तात्रेय, दत्तात्रेय पाहि माम्

श्री दत्तगुरु, दत्तगुरु, दत्तगुरु, रक्ष माम्

श्री सीताराम, सीताराम, सीताराम पाहि माम्

श्री हनुमन्त, हनुमन्त, हनुमन्त रक्ष माम्

ओंकार स्मरण स्तोत्र

ॐ स्मरणात् कीर्तनाद्वापि श्रवणाच्च जपादपि ।
ब्रह्म तत्प्राप्यते नित्यमोमित्येतत्परायणम् ।।१।।

१ सदा ओ३म् के ध्यान, श्रवण, जप और संकीर्तन द्वारा परब्रह्म की प्राप्ति होती है ।

ॐ इति स्मरणेनैव ब्रह्मज्ञानं परावरं ।
तदेकमोक्षसिद्धिं च तदेवामृतमश्नुते ।।२।।

२ ॐ के विचार मात्र से ही ब्रह्म-ज्ञान की परमावस्था और मुक्ति तथा अमरताकी स्थितिको मनुष्य प्राप्त कर लेता है।

तैलधारामिवच्छिन्नं दीर्घघंटानिनादवत्।
उपास्यं प्रणवस्याग्रं यस्तं वेद स वेदवित्॥३॥

३ जो मनुष्य एक पात्रसे दूसरे पात्रमें निरन्तर गिरती हुई तैलधारा या निरन्तर होनेवाले घंटानादके सदृश ओ३म् की विचार-धारा में निमग्न रहता है वही यथार्थमें वेदोंका ज्ञाता है।

बुद्धतत्त्वेन धीदोषशून्यमेकान्तवासिना।
दीर्घं प्रणवमुच्चार्य मनोराज्यं विजीयते॥४॥

४, ओ३म् के निरन्तर जप से महान् सत्ता अर्थात् परमेश्वर का ज्ञाता मौनी बुद्धि के दोष से इधर-उधर भटकनेवाले मन पर पूर्णाधिपत्य प्राप्त कर लेता है।

नासाग्रे बुद्धिमारोप्य हस्तपादौ च संयमेत्
मनः सर्वत्र संगृह्य ॐकारं तत्र चिन्तयेत्॥५॥

५ हाथ और पैर के पूर्ण नियमन के साथ, नासिका के अग्र-भागपर ध्यान जमा कर तथा मन को सब क्रियाओं से खींच कर मनुष्य को ॐकार का ध्यान करना चाहिए।

ॐ इत्येकाक्षरध्यानात् विष्णुर्विष्णुत्वमाप्तवान्
ब्रह्मा ब्रह्मत्वमापन्नः शिवतामभवत् शिवः॥६॥

६ ॐ के ध्यान से विष्णु ने विष्णुत्व को, ब्रह्माने ब्रह्मत्व को और शिवने शिवत्व को प्राप्त किया।

वेदान्त का सार (ब्रह्मके गुण)

अद्वैत अखण्ड अकर्ता अभोक्ता
असंग असक्त निर्गुण निर्लिप्त
चिदानन्दरूप शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥
अव्यक्त अनन्त अमृत आनन्द
अचल अमर अक्षर अव्ययः
चिदानन्दरूप शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥
अशब्द अस्पर्श अरूप अगाध
अप्राण अमन अतीन्द्रिय अदृश्य
चिदानन्दरूप शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥
सत्यं शिवं शुभं सुन्दरं कान्त
सच्चिदानन्द संपूर्ण सुखशान्तं
चिदानन्दरूप शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥
चेतन चैतन्य चिद्घनचिन्मय
चिदाकाश चिन्मात्र सन्मात्र तन्मय
चिदानन्द रूप शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥
अमल विमल निर्मल अचल
अवाङ्मनोचर अक्षर निश्चल
चिदानन्दरूप शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥
नित्य निरुपाधिक निरतिशय आनन्द
निराकार ह्रींकार ॐकार कूटस्थ
चिदानन्दरूप शिवोऽह शिवोऽहम् ॥
पूर्ण परब्रह्म प्रज्ञान आनन्द
साक्षी द्रष्टा तुरिय विज्ञान आनन्द
चिदानन्दरूप शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥
सत्यं ज्ञानमनन्त आनन्द
सच्चिदानन्द स्वयं ज्योतिप्रकाश
चिदानन्दरूप शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥
कैवल्य केवल कूटस्थ ब्रह्म
शुद्ध सिद्ध बुद्ध सच्चिदानन्द
चिदानन्द रूप शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥
निर्दोष निर्मल विमल निरंजन
नित्य निराकार निर्गुण निर्विकल्प
चिदानन्दरूप शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥
आत्मा ब्रह्मस्वरूप चैतन्य पुरुष
तेजोमय आनन्द तत्त्वमसि लक्ष्य
चिदानन्द रूप शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥
सोऽहं शिवोऽहं अहं ब्रह्मास्मि महावाक्य
शुद्ध सच्चिदानन्द पूर्ण परब्रह्म
चिदानन्द रूप शिवोहं शिवोऽहम् ॥

निर्गुण गीत

निर्गुणोऽहं निष्कलोऽहं निर्ममोऽहं निश्चलः
नित्यशुद्धो नित्यबुद्धो निर्विकारो निष्क्रियः ॥१॥
निर्मलोऽहं केवलोऽहं एकमेव अद्वितीयः
भासुरोऽहं भास्करोऽहं नित्यतृप्तो चिन्मयः ॥२॥

ओ३म्

भूमिका

ब्रह्म अनन्त है। ब्रह्म ही केवल वास्तविक सत्ता है। ब्रह्म स्वतन्त्र और स्वयम्भू है। सीमित और सान्त वस्तु कभी भी, स्वयं-सत्तात्मक, वास्तविक और स्वाश्रित नहीं हो सकती; उसे अपनी सत्ता के लिए किसी अन्य सत्ता ब्रह्म पर आश्रित रहना पड़ता है। लोग साधारणतः यह प्रश्न उठाते हैं कि यदि ब्रह्म ही एकमात्र सत्य है, तो फिर सान्त कैसे और क्यों प्रकट होता है। तुम्हारी कल्पना-शक्ति की उड़ान यहां तक नहीं पहुंच सकती कि किस प्रकार प्रतीतियाँ ब्रह्मसे समुद्भूत होती और उसमें लय हो जाती है। तुम "अहं" के ज्ञानका अवगाहन करनेके पश्चात् ही इस सत्यतक पहुंच सकते हो। समय, स्थान और कार्य-कारण के नियमपर आश्रित रहनेवाली सान्त बुद्धि; समय-स्थान और कार्य-कारण के नियमों से सर्वथा मुक्त रहनेवाली सत्ता तक नहीं पहुंच सकती।

संसार की किसी भी सान्त वस्तुमें आनन्द नहीं है। जहाँ कोई किसी को देखता, सुनता या समझता है वह सान्त है। सान्त का विनाश निश्चित है। सान्त वस्तु समय, स्थान तथा कार्य-कारण के नियमों से बन्धी हुई है। वह माया की उत्पत्ति है, अवास्तविक है, केवल प्रतीति-मात्र है; उसकी स्वतन्त्र सत्ता नहीं है; उसे अपनी सत्ताके लिए अनन्त पर आश्रित रहना पड़ता है; वह कभी अनन्त से पृथक् नहीं रह सकती।

कुछ अज्ञानी पुरुषों का यह दावा है कि वेदान्त केवल अनैतिकता, घृणा और निराशावाद का ही प्रचार करता है। यह हृदय को संतप्त करनेवाली ग़लती है, मिथ्या भ्रम है। वेदान्त न तो अनैतिकता के पथ पर ले जाता है और नाँही नैतिकता के प्रति उदासीन-वृत्ति धारण करना सिखाता है। अनैतिक प्राणी के लिए ब्रह्म-साक्षात्कार असम्भव है। मुक्ति पदकी आकाङ्क्षा करनेवाला मनुष्य ही, जिसमें नैतिकता का विकास अपनी पराकाष्ठा तक पहुंच चुका है, वेदान्त का विद्यार्थी हो सकता है? तुम यह कैसे आशा कर सकते हो कि एक मुमुक्षु पुरुष जिसमें विवेक, प्रसाद, सहिष्णुता, श्रद्धा, विश्वास, एकाग्रता और मुक्ति की दृढ़ अभिलाषा उदित हो चुकी है, किस प्रकार अनैतिक जीवन व्यतीत कर सकता है? यह बिलकुल ग़लत है। वेदान्त तुम्हारे मोह, स्वार्थ-संसक्त स्नेह तथा शरीर के प्रति मिथ्या अनुराग का समूलोन्मूलन करना चाहता है। वेदान्त तुम में उदार, निःस्वार्थ, पवित्र, दिव्य प्रेम की मन्दाकिनी बहाना चाहता है। वेदान्त निराशावाद के स्थान पर आशावाद की सुनहली उषा के दर्शन कराना सिखाता है। वेदान्त सिखाता है कि "इस प्रतीत होनेवाले मिथ्या, क्षणिक आनन्द के पाश से मुक्त हो जाओ; तुम्हें दिव्य, शाश्वत आनन्दकी अनुभूति होगी; इस तुच्छ "अहं" को जड़ से उखाड़ कर फेंक दो, तुम अनन्त के साथ एक हो जाओगे; तुम अमर हो जाओगे, इस मिथ्या संसार को छोड़ दो; तुम भगवान् के राज्य में या महती शान्तिके प्रदेशमें प्रवेश करोगे" क्या यह निराशावाद है? निश्चयसे नहीं। यह तो चमत्कृतिपूर्ण आशावाद है।

वेदान्त शरीर, पत्नी, शिशु और वैभव-विलास के प्रति तुम्हारे मोहको नष्ट करना चाहता है ! वेदान्त तुम्हें समस्त सांसारिक इच्छाओं और सांसारिक पदार्थों की प्राप्ति के लिए निरन्तर बनी रहनेवाली अभिलाषाओंसे छुटकारा दिलाना चाहता है। वेदान्त शक्ति, यश और नाम के प्रति तुम्हारे मोह को विनष्ट करना चाहता है। वेदान्त तुम्हारे समस्त सांसारिक बन्धनों को तोड़ना चाहता है। वेदान्त विवेक की कृपाण द्वारा सांसारिक आसक्तियों को छिन्न भिन्न करना चाहता है।

इच्छाओंसे ऊपर उठो। अपनी मानसिक, भिखारियों जैसी दैन्य वृत्ति का परित्याग करो। अपनी आत्मा की सत्ता और अलौकिकता को हृदय से अनुभव करो। आत्मा में इच्छाओं और वासनाओं का नितान्त अभाव है। यह सदा शुद्ध, पवित्र, निर्मल है। यह परिपूर्ण है। इस प्रकाशमान आत्मा के साथ अपनी एकता अनुभव करो। तुम्हारी समस्त इच्छाएं स्वयमेव नष्ट हो जाएँगी। तुम्हारी समस्त इच्छाएं स्वयमेव पूर्ण हो जाएंगी। इच्छाओं की पूर्तिका यह गुप्त रहस्य है। प्रकृति तुम्हारी आज्ञाकारिणी दासी बन जाएगी ; सृष्टि के समस्त तत्त्वों पर तुम्हारा आधिपत्य हो जाएगा। आठों सिद्धियां और ऋद्धियाँ तुम्हारे चरणों पर लोटेंगी। यही वेदान्त की उच्च, शानदार महान् शिक्षा है।

वेदांत या आत्मा का ज्ञान केवल सन्यासियों या हिमालय की कन्दराओं और वनों में विचरनेवाले योगिओं की ही एकमात्र सम्पत्ति नहीं है। उपनिषदों के अध्ययन से तुम्हें पता लगेगा कि बहुत से क्षत्रिय अधीश्वर अपने दैनिक-कृत्यों में व्यस्त रहते हुए

भी ब्रह्म-ज्ञानी थे। वे ब्राह्मण पुरोहित के भी शिक्षक थे। पांचाल देश के राजा प्रवहण जाबालि ने गौतम और उनके पुत्र श्वेतकेतु को पंचाग्नि विद्या की शिक्षा दी थी। श्री शुकदेवजी को ब्रह्म-साक्षात्कार के लिए राजा जनक का आश्रय ग्रहण करना पड़ा था।

तुम्हें क्रियात्मिक वेदान्ती होना चाहिए। केवल सिद्धान्त-निर्माण और लेक्चरबाज़ी बौद्धिक व्यायाम है। इससे वास्तविक लाभ होनेकी तिल-मात्र भी आशा नहीं। यदि तुम वेदान्त को क्रियात्मिकता का बाना नहीं पहिनाते तो केवल सिद्धान्तों की तोतारटन्त का कोई मूल्य नहीं। तुम्हें अपने दैनिक व्यवहारों में वेदान्त का क्रियात्मिक अभ्यास करना चाहिए। वेदान्त एकता का पाठ सिखाता है। तुम्हें अपने प्रेम का प्रकाश सृष्टि के कण-कण तक फैलाना चाहिए। वेदान्त का सत्य और वास्तविक स्वरूप तुम्हारे अणु-अणु में व्याप्त हो जाना चाहिए। यदि तुम रंगमंच पर आकर जनता को मंत्रमुग्ध करनेवाला भाषण देते हो और उच्च स्वर से घोषणा करते हो कि "मैं सृष्टि के प्रत्येक पदार्थ में व्याप्त हो रहा हूं। मेरेसे अतिरिक्त कोई भिन्न सत्ता नहीं" परन्तु अगले ही क्षण भाषण-समाप्ति पर यदि तुम स्वार्थ और पृथकता का भाव दर्शाते हो तो तुम्हारा जनता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। लोग तुम्हें शुष्क वेदान्ती के नाम से पुकारेंगे। देखो, राजा जनक किस प्रकार का जीवन व्यतीत करते थे। वे अपने राज्यका सुचारु-रूपेण शासन-संचालन करते हुए भी क्रियात्मिक वेदान्ती का जीवन व्यतीत करते थे। राजा जनक से अधिक कार्यव्यस्त आदमी की कल्पना तुम नहीं कर सकते। राजा जनक करोड़ों

मनुष्यों पर शासन करते हुए भी गम्भीर विचारक, उच्च दार्शनिक और क्रियात्मिक वेदान्ती थे। उन्हें अपने शरीर, सम्पत्ति और परिवार के प्रति आसक्ति नहीं थी। वे समदर्शी और शान्त थे। विलासिता और वैभव के मध्य में रहते हुए भी वे कार्य-व्यग्र थे। वे बाह्य घटनाओं से प्रभावित नहीं होते थे। उनमें सदा शान्ति की दिव्य धारा बहती थी। यही कारण है कि वे आज भी हमारे हृदयों में विराजमान हैं।

यदि एक योगी या संन्यासी कन्दराओं और वनों में विचरता हुआ तो अपनी मानसिक शान्ति को कायम रख सकता है; परन्तु नगर के विक्षुब्ध वातावरण में उनका मानसिक प्रसाद विलीन हो जाता है; तो वह यथार्थ योगी नहीं है; वह क्रियात्मिक वेदान्ती नहीं है। उसमें आन्तरिक आत्मिक-शक्ति का अभी अभाव है। वह अभी माया के साम्राज्य में विचर रहा है। एक सच्चा योगी प्रत्येक अवस्था में अपनी चित्तवृत्ति को शान्त रख सकता है। यही गीता की मुख्य शिक्षा है।

इस वसुधा पर महात्मा गांधी से बढ़कर कोई सच्चा क्रियात्मिक वेदान्ती नहीं है। जीवन के प्रत्येक क्षण में वे वेदान्त को क्रियात्मिकता का बाना पहिना रहे हैं। वे विश्व की भलाई के लिए ही प्राण-धारण कर रहे हैं। उनके आकाश के समान विशाल, हिमालय के समान उन्नत और समुद्र के समान गम्भीर हृदय में समस्त विश्व व्याप्त है। आत्म-बलिदान, सेवा, सत्य, अहिंसा, एकता और पवित्रता ही उनका धर्म है। परन्तु विश्व की यह महान् विभूति कभी नहीं विज्ञापन करती कि "मैं ब्रह्म हूं—अहं ब्रह्मास्मि।"

पूर्व दिशा में उगता हुआ सूर्य, खिलते हुए फूल, गाते हुए पंछी, बहती हुई नदियां, फल धारण करते हुए वृक्ष—ये सब विश्व को क्रियात्मिक वेदान्त की शिक्षा दे रहे हैं। ये प्राणि-मात्र की निस्वार्थी सेवा के लिए सर्वदा समुद्युत है। सूर्य भगवान् दीन की कुटिया पर भी और सम्पत्तिशाली सम्राट् के प्रासाद पर भी अपनी अमृत-मयी किरणों को एक जैसा बिखेरते हैं; फूल बिना किसी लाभ की आशा के अपनी सुगन्ध को सर्वत्र फैलाते हैं। शीतल, निर्मल, जीवन को ताज़गी देनेवाला भगवती भागीरथी का जल सबके उपयोग के लिए है। फलधारी वृक्ष अपने बाग़बान का भी उसी प्रकार मीठे, स्वादिष्ट फलों से स्वागत करते हैं जिस प्रकार कि अपने को कुल्हाड़े से काटनेवाले का।

तुम्हारे लिए न जन्म है और न मृत्यु। तुम अमर, अविनाशी आत्मा हो। माया तुम्हें धोखा देती है और तुम इस मरणधर्मा शरीर के साथ अपनी एकता अनुभव करने लगते हो। माया के बन्धन से छुटकारा पाओ, अनन्त शान्ति के प्रदेश में ऊँचे उड़ो और अमरत्व प्राप्त करो।

अपने अन्दर भगवान् को न देख कर बाहिर ढूँढ़ना हाथ में आए हुए उज्वल मोतियों को छोड़ कर शंखों की तलाश में जाने के सदृश है। यदि तुम भगवान् को अपने हृदय में नहीं पा सकते, तो तुम उसे कहीं नहीं पा सकते। हृदय की गुप्त-गुहा में भगवान् विराजमान है। भगवान् सूक्ष्मातिसूक्ष्म है। अपने हृदय-कमल को पवित्रतम बनाओ। इस सत्य को अनुभव करो और दिव्य आनन्द का उपभोग करो।

यदि तुम आत्मा तक पहुंचना चाहते हो तो अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय और आनन्दमय कोशों के पाँच पर्दों को फाड़ डालो।

ऐ संसार के भोले प्राणियों ! अपनी इस लम्बी अज्ञान की निद्रा से जागो। आत्मा का ज्ञान प्राप्त करो। ऐ मिथ्या-संसार में विचरनेवाले मनुष्यो ! शाश्वत शान्ति के निवासस्थान, अनन्त आनन्द और शक्ति के स्रोत, जीवन के दाता, प्रकाश और प्रेम की गंगा की ओर वापिस जाओ। अपने मन को आत्मिक विचारों से परिपूर्ण कर दो। अपनी भावनाओं को पवित्रता और दिव्यता से सराबोर कर दो। शरीर के रोम-रोम में प्रकाश की लहरें बहने दो। प्रत्येक श्वास के साथ अनन्तता और अमरता का "सोऽहम्" का संगीत अन्तर से निकलने दो।

ओ३म् का निरन्तर जप, संगीत और ध्यान वेदान्तिक साधना का आवश्यक भाग है। तुरीयावस्था, ब्रह्म, आत्मा और ओ३म् एक ही है। ओ३म् समस्त वेदों के सार का प्रतीक है। ओ३म् अद्भुत शक्तिओं का खज़ाना है। वेदान्तपथ पर चलनेवाले पुरुषों को श्रद्धा और भाव के साथ निरन्तर ओ३म् का जप करना चाहिए और इस रहस्यवादी क्रिया के अभ्यास द्वारा अपार आनन्द उठाना चाहिए।

वार-वार ओ३म् का यश गाओ। अपने हृदय और आत्मा को ओ३म् के संगीत की ओर सदा लगाए रक्खो। जीवन की समस्त क्रियाएं पवित्र प्रणव की पूजा के रूप में करो। सदा ओ३म् में विचरो। ओ३म् को अपने निवासस्थान का केन्द्र-विन्दु बना

लो। प्रत्येक श्वास के साथ ओ३म् का उच्चारण करो। तुम पर सदा ओ३म् की मस्ती छाई रहे। ओ३म् के जागरण-शील साम्राज्य में इस मिथ्या संसार के स्वप्न को बिलकुल भूल जाओ। ओ३म् के दिव्य आनन्द में संसार के दुःख दर्दों को पी जाओ। ओ३म् ही दिव्य, शाश्वत आनन्द और शान्ति का परम धाम है।

इस आध्यात्मिक रण-क्षेत्र में सच्चे, उत्साही आध्यात्मिक वीर बनो। मन, इन्द्रियों और वासनाओं तथा संस्कारों के साथ आन्तरिक संग्राम इस बाह्य-संग्राम से कहीं अधिक भयंकर है। बहादुरी के साथ मन, इन्द्रियों और बुरी वासनाओं को कुचल डालो। ओ३म् जप के टारपीडो द्वारा अभिमान, ईर्ष्या. लोभ और आवेश को विध्वंस कर दो। उपचेतना के समुद्र में पड़ी हुई वासनाओं को ओ३म् की सुरंगों द्वारा उड़ा दो। विवेक के टैंकों द्वारा इन शत्रुओं का समूलोन्मूलन करो। Divine league की स्थापना करो और अपने शत्रुओं का विध्वंस करनेके लिए सहन-शीलता, और धैर्य, शान्ति तथा प्रसाद के साथ मैत्री स्थापित करो "शिवोऽहम्" का बाम्ब फेंक कर शरीर की इमारत तथा इस विचार को कि मैं शरीर हूं, मैं कर्त्ता हूं, मैं भोक्ता हूं, तहस-नहस कर डालो। तमस् और रजस् के नाश के लिए सत्व की गैस फैलाओ। ऐन्द्रियिक, विषय-भोग के पदार्थों के बिजली के बल्बों को बुझा कर ब्लैक-आउट कर दो ताकि तुम पर कोई आक्रमण न कर सके। आत्मा के खज़ाने को प्राप्त करने के लिए एकाग्रता से लड़ो। अब समाधि, मोक्ष, और निर्वाण का आनन्द तुम्हें प्राप्त होगा। चाहे तुम कोई भी हो, कहीं भी उत्पन्न हुए हो इससे कोई

मतलब नहीं। भाव और श्रद्धा के साथ ॐ का जप ब्रह्म-ज्ञान का अचूक साधन है।

ओ३म् के अतिरिक्त कुछ मत सोचो। अपने समस्त कार्य ओ३म् के प्रति समर्पित कर दो। ओ३म् ही तुम्हारे जीवन का लक्ष्य हो। ओ३म् के दिव्य आनन्द में ही तुम सदा डूबे रहो।

आनन्द कुटीर, हृषीकेश।
२६ फरवरी १९४०

स्वामी शिवानन्द

विषय-सूची

तृतीय परिच्छेद

चतुर्थ परिच्छेद

(प्रणव रहस्य)

प्रथम परिच्छेद—ब्रह्मका ॐ नाम

१—'ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म'

वेदान्तमें जिसे परब्रह्मके नामसे पुकारा गया है जो सर्वोपरि परम पुरुष है, जो चराचर सभी जीवोंका अधिष्ठान है, वह नाम, जाति वा श्रेणीविभागके अन्तर्गत नहीं है। उसके सम्यक् ज्ञानके लिये उसे किसी न किसी रूपमें पुकारनेके लिये वेदोंने प्रतीक रूपसे नामका आश्रय लिया है। नवजात शिशुका कोई भी नाम नहीं होता, पर जब उसका नामकरण हो जाता है, तब उस नामसे पुकारनेपर वह किसी न किसी रूपमें उत्तर भी देता ही है। वह हमारी ध्वनि-को पहचानता है और हम भी उसके भावोंको किसी ध्वनि, शब्द वा नामके आधारपर ही समझ लेते हैं। जो सांसारिक तापोंसे सन्तप्त होकर व्याकुल हो जाते हैं वह अपनी विकलता वा संताप दूर करनेके लिये अपने "इष्टदेव" की ही शरणमें जाते हैं और अपने 'उपास्यदेव' को किसी नामसे ही पुकारते हैं। वह नाम उस देवका प्रतीक होता है और उस नामका ध्यान वा जप किया जाता है। इसी प्रकार वह "परब्रह्म" भी किसी नामसे पुकारा जाता है, तब साधकके किसी

भी नामसे संबोधित करनेपर जो गुप्त और अव्यक्त है वह भी प्रकट और व्यक्त होता है। *

सबके परे वह परात्पर ब्रह्म ही है, उससे परे कोई नहीं है। वेदोंमें वही ॐ नामसे पुकारा गया है। अतएव (एकाक्षर ब्रह्म) ॐ की उपासना की जाती हैं। ॐ सब कुछ है। "सर्वं तस्योपव्याख्यानम्" यह सब पसारा ॐ का ही है। ईश्वर वा ब्रह्मका प्रतीक अथवा नाम ॐ ही है। तुम्हारा आदि नाम ॐ ही है। मनुष्यकी त्रिगुणात्मिका प्रकृति 'त्रिपुरी' रूपसे सर्वत्र सबमें ॐ से ही परिव्याप्त है। "ईशावास्यमिदं सर्वम्" ॐ का ही यथार्थ रूप है। अनन्त कोटि ब्राह्मणोंका अधिष्ठान ॐ से ही हुई है। इस भौतिक जगत्‌की उत्पत्ति ॐ से ही हुई है। यह विश्व ॐ में ही स्थित है और ॐ में ही लीन हो जाता है। इसकी सृष्टि, स्थिति और लय भी ॐ में है। ॐ ध्वनिका निर्माण 'अ', 'उ' और 'म' इन तीन अक्षरोंसे हुआ है। 'अ' इस भूलोक वा स्थूल दृश्य जगतका,'उ' सूक्ष्म जगतका, मनोमय जगतका, नक्षत्र जगतका, भुवर्लोक और स्वर्गलोकका द्योतक है। 'म' सुषुप्तिसे सम्बन्ध रखनेवाले अदृष्ट, अगोचर अथवा जाग्रत अवस्थामें भी

---

* समुझत सरिस नाम अरु नामी। प्रीति परस्पर प्रभु अनुगामी॥
नाम रूप दुइ ईस उपाधी। अकथ अनादि सुसामुझि साधी॥
को बड़ छोट कहत अपराधू। सुनि गुन भेद समुझिहहिं साधू॥
देखिअहिं राम नाम आधीना। रूप ज्ञान नहिं नाम विहीना॥
रूप विशेष नाम बिनु जाने। करतल गत न परहिं पहिचाने॥
नाम रूप गति अकथ कहानी। समुझत सुखद न परति बखानी॥
अगुन सगुन बिच नाम सुसाखी। उभय प्रबोधक चतुर दुभाखी॥
(श्री रामचरित मानस)

जिसका ज्ञान इन्द्रियोंसे नहीं हो सकता—और जहां 'बुद्धि' की भी पहुंच नहीं है—अर्थात जो 'अवाङ्ग मनोगोचर' (वचन अगोचर बुद्धि पर) अथवा मन, बुद्धि और वाणीके भी परे है, उसका परिचय देता है।

ॐ सर्व का ही प्रतिरूप है। ॐ ही आपके प्राण, बुद्धि और विवेकका आधार स्तम्भ है। संसारमें जितने भी स्थावर जंगम पदार्थ हैं वह सब ॐ में प्रतिष्ठित हैं। अखिल विश्व ही ॐ से उत्पन्न हुआ है, ॐ में स्थित है और ॐ में ही लय को प्राप्त होता है। साधकको चाहिये कि 'ध्यान' में बैठते ही सबसे पहले दीर्घ प्रणवकी ॐ ध्वनि तीन बार, छः बार, अथवा १२ बार उच्च स्वरसे करे। ॐ की यह सुदीर्घ ध्वनि मनसे संसारकी सभी बातोंको खदेड़ भगायेगी, विक्षेपको हटा देगी और मन 'गंगा नीर' की तरह निर्मल हो जायेगा। फिर तो कुछ दिनोंके ध्यानाभ्याससे ही आप भी "मन ऐसो निर्मल भयो, जैसो गंगा नीर। पाछे पाछे हरि फिरैं, कहत कबीर कबीर॥" वाले कबीर ही हो जायेंगे। दीर्घ प्रणवकी ॐ ध्वनिकी समाप्तिके साथ ही ॐ का मानसिक जप और ध्यान भी आरम्भ कर दीजिये। *

स्वर सभी वर्णोंके प्राण हैं। स्वर वह है जो स्वतः ही रविकी तरह प्रकाशमान हो। इसका उच्चारण अनायास बिना किसी अन्य

---

* श्रीमद्भगवद्गीता अ० ८-१२।१३

सर्वद्वाराणि संयम्य मनो हृदि निरुध्य च।
मूर्ध्न्याधायात्मनः प्राणमास्थितो योगधारणाम्॥
ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन्।
यः प्रयाति त्यजन्देहं स याति परमां गतिम्॥

वर्णकी सहायताके स्वतः ही होता है। 'व्यंजन' वह है जो आगे वा पीछे स्वरकी सहायताके बिना बोला नहीं जा सकता। व्यंजनका उच्चारण स्वरकी सहायतासे ही हो सकता है। जिस तरह शरीरका अस्तित्व आत्मापर ही अपेक्षित है,ठीक उसी प्रकार अपने उच्चारणके लिये व्यंजन भी स्वरपर ही निर्भर करते हैं। संस्कृतके सभी स्वर 'अ' और 'उ' के अन्तर्गत हैं। 'अ' और 'उ' सभी स्वरोंके माता-पिता अथवा जनक हैं। संसारकी सभी भाषाओंकी अपेक्षा स्वरोंकी सबसे अधिक संख्या संस्कृतमें ही है। संसारकी सभी भाषाओंके जितने भी वर्ण हैं, वे सभी इस आश्चर्यजनक परम पवित्र और रहस्यमय एकपदी एकाक्षर (ब्रह्म) ॐ के ही अन्तर्गत हैं। इस लिये यह प्रणव ॐ "एकाक्षर ब्रह्म ॐ" के रूपमें ब्रह्मका सच्चा प्रतीक नाम भी है।

आप अपने श्वासको ध्यानपूर्वक देखें। जब आप श्वास खींचते हैं तब "सो" की और जब आप श्वास (प्रश्वास) छोड़ते हैं तब "हं" की ध्वनि स्वतः ही उत्पन्न होती है। आप श्वास-श्वासपर—प्रति श्वासके साथ ही "सोऽहं" की ध्वनि स्वाभाविक रूपसे अनायास ही कर रहे हैं। यह आपकी श्वासगत प्रकृत ध्वनि है। संस्कृतमें 'सो' का प्रयोग 'वह' और 'हं' का 'अहं' वा मैं के अर्थमें किया जाता है। इस प्रकार प्रत्येक श्वासके साथ 'वह मैं हूं' अथवा 'मैं वह हूं' की माला आप प्रति क्षण फेर रहे हैं। आपका श्वास ही, प्रतिक्षण आपको इस बातकी 'सुधि' वा चेतावनी दे रहा है कि आप और आपकी वह परम आत्मा वस्तुतः एक ही है। व्याकरण एवं भाषा शास्त्रके नियमानुसार 'सोऽहं' में 'स' और 'ह' दोनों ही

व्यंजन हैं, पर इन दोनोंको एक करनेवाले 'ओ' के 'अ' और 'उ' और 'म' का अनुस्वार ॐ अथवा अनुस्वारके रूपमें 'म' विरहित अ—'ओं' के रूपमें ये तीनों स्वर ही हैं। इस प्रकार 'स' और 'ह' को निकाल देनेपर जो कुछ वच रहता है वह निःशेप वा अशेप शेप 'ओं' वा ॐ ही है। व्यंजनोंका अपना कोई भी स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है। इनका अस्तित्व स्वरपर ही निर्भर करता है। 'स' और 'ह' मिथ्या नाम और रूप अथवा इन नाम रूपात्मक विश्वकी आपेक्षिक सत्ताके द्योतक हैं। इनकी अपनी कोई भी स्वतन्त्र सत्ता नहीं है। एक मात्र सद्वस्तु ॐ ही है। ॐ ही सत् नाम है। ॐ ही एक मात्र 'सत्य' है। प्रणव ॐ ही आपके श्वासका प्राण है। उपनिपदोंमें जो "दश शान्तपः" के नामसे प्रसिद्ध हैं, और जिनके अन्तमें ॐ शान्तिश्शान्तिश्शान्तिः" का शान्ति गायन है, वह सभी ॐ ध्वनिसे ही आरम्भ किये जाते हैं!" इस प्रकार यह ॐ ही शान्ति, चित्तकी एकाग्रता, शमता, साम्यता और आत्मौपम्यता, आदिका देनेहारा है! यह एकाक्षर ॐ अखिल विश्वको ही अपने एक अंशमें स्थित रखता है। एकांशेन स्थितो जगत्!

"अथवा वहुनैतेन किं ज्ञातेन तवार्जुन
विष्टाभ्याहमिदं कृत्स्नं एकांशेनस्थितो जगत्"
"वहुत कहा तो सों कहौं, अर्जुन ज्ञान वढ़ाइ
एक अंश ते मैं जगत व्याप्त कियो सुनु भाइ"

सभी भाषाओंका प्रथमाक्षर 'अ' है, और 'म' संस्कृतका अन्तिम पद है अर्थात् आदिसे अन्ततक अखिल विश्वमें जो कुछ है वह 'अ से म' में ही है। इसे ही सवका 'आल्फा और ओमेगा' (आया और

गया हुआ) भी कहते हैं ! आदिसे अन्ततक, सभी इसके अन्तर्गत हैं और हमारी कल्पनाके अतिरिक्त औरं भी जो कुछ त्रिकालातीत वा देहातीत वा मन, बुद्धि और वाणीके परे (वचन अगोचर बुद्धि पर) है, वह सव इस ॐ में ही है ! अतएव ब्रह्मके ध्यानका समुचित और पूर्ण प्रतीक ॐ ही है। अन्य कोई भी प्रतीक अखिल विश्व और इसके परे रहनेवाले जगत्को अपने उदरमें इस प्रकार नहीं रख सकता है !

गङ्गाके अविरल प्रवाहमें जो ध्वनि होती है वह 'प्रणव' की ॐ ध्वनि ही है, कोई भी ध्वनि जो हम दूरसे सुनते हैं अथवा जो किसी मेले वा जनसमूहसे, कुछ दूरपर सुनायी पड़ती है, अथवा इंजिनके (Fly wheel) उड्डीयान यंत्र वा चक्रके गतिशील होनेपर होती है, जो ध्वनि वर्षामें जलवृष्टिकी होती है, अथवा अग्निकाण्डके समय जो ध्वनि अग्निकी विकरालज्वालाओंसे निकलती है, जो ध्वनि अनभ्र वज्रपातके समय होती है, वह सव ॐ की ही है अथवा किसी भी शब्दको लीजिये, सबमें ॐ के ही दर्शन होंगे। ॐ ब्रह्मकी ही तरह आकाशवत् सर्वव्यापी है !

ब्रह्मका मुख्य प्रतीक ॐ ही है। यह ब्रह्मका शक्तिसूचक नाम है। यही परम पवित्र एकाक्षरी मन्त्र है। यह सभी वेदोंका सार रूप है। "प्रणवः सर्व वेदेषु !" उस पार, 'अभय और अमृत' की उस छोरपर ले जानेवाली नौका है। ॐ का अर्थ सहित ध्यान श्रद्धापूर्वक कीजिये। ॐ का चिन्तन अथवा ध्यान करते हुए आपको उस ब्रह्मका ही ध्यान वा चिन्तन करना होगा जिसका यह ध्वन्यात्मक प्रतीक है ! इस प्रकार ब्रह्म वा उस परम पुरुषका उपयुक्त नाम ॐ ही है।

जिस प्रकार मनुष्य अपना कल्पित प्रिय नाम सुनकर ही अत्यन्त प्रसन्न हो जाता है उसी प्रकार ब्रह्म भी अपने प्रिय नाम ॐ की संकीर्तन ध्वनि, उच्चारण, जप या ध्यानसे अत्यन्त आनन्दित होता है। जिस प्रकार मिट्टी, जल, अग्नि आदिके संयोगसे ही बनी हुई मूर्त्तियां, इन पंच तत्वों वा पंचभूतोंके ही प्रकृत रूप हैं उसी प्रकार अर्थ सहित "तस्य वाचकः प्रणवः" ॐ भी ब्रह्मका ही रूप है। "गिरा अर्थ जल वीचि सम कहियत भिन्न न भिन्न।" जिस प्रकार कोई भी वाणी अपने किसी विशेष अर्थको ही बताती है, जल और तरङ्ग भी समान रूपसे जल ही है, कहनेमें पृथक्-पृथक् दो हैं। पर गिरा अर्थसे भिन्न नहीं हैं, और तरंग जलसे भिन्न नहीं है। दोनों ही अभिन्न और एक ही हैं। अथवा जिस प्रकार "वृक्ष" शब्दके सुनते ही स्वभावतः वृक्षकी जड़, डाली, शाखा, पत्ती, फूल, फल सबका ही ध्यान हो आता है, उसी प्रकार ब्रह्मका यह ॐ नाम भी ब्रह्मके सत्-चित्-आनन्द, सच्चिदानन्द स्वरूपका ही परिचय देनेवाला है। जिस प्रकार नाम और नामी (जिसका नाम है) में कोई भेद नहीं होता, उसी प्रकार शब्द और अर्थ दोनों दो नहीं एक ही हैं, अभेद हैं। संसारके सभी वाक् समुदाय प्रणव ध्वनि ॐ में ही लीन होते हैं। जितने भी अर्थ हैं अर्थात् जितने भी पदोंका प्रयोग अर्थ (पदार्थ) की प्राप्तिके लिये किया जाता है वह सभी ध्वनि, नाम वाणी रूप ही हैं और यावत् नाम, ध्वनि वा वाणी एकाक्षर ब्रह्म ॐ अथवा "एक सत्नाम ॐकार" में ही लीन हो जाती हैं। अखिल विश्व ही ॐ से निकलता और ॐ में ही जा मिलता है। विश्वकी सृष्टि, स्थिति और लय भी ॐ में

ही है। ॐ की महिमा अपार है। इसकी उपासना ही सच्ची उपासना है। यही हमारा मुख्य कर्तव्य है। साधनाके आरम्भमें इसका अभ्यास दीर्घ प्रणवके रूपमें उच्च स्वरसे करना चाहिये। ॐ की साधना दीर्घ और उच्च स्वरसे ही आरम्भ किया कीजिये. यही ॐ का संकीर्तन होगा। "ॐ" का जप मन ही मन अर्थका विशेष ध्यान रखते हुए और ध्यान, जिस ब्रह्मका यह नाम है, उस निर्गुण और अव्यक्त ब्रह्मके रूपमें ही करना चाहिये।

ॐ ही ब्रह्मका मुख्य नाम क्यों हो? 'तस्य वाचकः प्रणवः' श्रुतिने ऐसी घोषणा ही क्यों की? क्या इसके अतिरिक्त अन्य कोई भी ऐसा नाम वा शब्द नहीं है जो तत्त्वतः उस एकमात्र 'सत्य' वा वस्तुत्व रूप ब्रह्म का ही वाचक हो? नहीं, ऐसा और कोई भी नाम वा ध्वनि नहीं है जो इस प्रकार आकाशवत् सर्वव्यापी और परिपूर्ण हो। इसमें ऐसी कौन-सी विशेषता है, इसका रहस्य जानना हो तो श्रद्धा और भावपूर्वक ॐ का सार्थक उच्चारण एक घंटेतक दीर्घ प्रणवके रूपमें कीजिये और इसी प्रकार ब्रह्मके किसी अन्य नाम वा किसी भी 'शब्द' का उच्चारण एक घंटेतक कर देखिये। मंत्रद्रष्टा ऋषियोंके श्रुति, पुराणों और "विज्ञान" के अनुभूत प्रयोगसे भी यह सप्रमाण सिद्ध हो चुका है कि ब्रह्म और इसके ध्वन्यात्मक प्रतीक ॐ में "गिरा अर्थ जल वीचि सम, कहियत भिन्न न भिन्न" का ही अभिन्न सम्बन्ध है। वाणी हमारे हृद्गत भावोंको ही प्रकट करती है। वाणी और भाव, शब्द और अर्थ एक दूसरेसे विलग नहीं किये जा सकते। दोनों अभेद हैं, अभिन्न हैं। इसी प्रकार एकाक्षर ब्रह्म ॐ और

सच्चिदानन्द स्वरूप परब्रह्म भी अभिन्न, अनन्य और अद्वय रूप हैं। जिस प्रकार अपने पुत्र "गोविन्द" को गोविन्द नामसे पुकारने अथवा गोविन्द नामी पुत्रके 'गोविन्द' नामका ध्यान वा चिन्तन करनेपर गोविन्द नामी पुत्रकी ही आकृति आपकी स्मृतिपर अङ्कित हो जाती है और पुत्र गोविन्दकी ही आकृति आँखोंके सामने नाचने लगती है, उसी प्रकार जब आप पुत्र गोविन्दका ध्यान (पुत्र) गोविन्दकी आकृति वा रूपमें करने लगोगे, तब आपका यह 'गोविन्द' जिस गोविन्द (ब्रह्म) का प्रतीक वा स्थूल रूप है उसका ध्यान भी अनायास इसी रूपमें हो जायेगा। इसमें आश्चर्य्य वा संदेहकी बात ही नहीं है। नाम और नामीमें, ॐ और ब्रह्ममें प्रतीक रूपसे कोई भी भेद नहीं है। दोनों ही अद्वय, अभेद और अभिन्न हैं।

एकाक्षर ब्रह्म ॐ परब्रह्मका सार्वजनिक और सार्वभौमिक रूप है। यह ब्रह्मके यावत् नाम रूप प्रतीक, सम्प्रदाय, मत और सिद्धान्तों-का सर्वश्रेष्ठ प्रतिनिधि है।

जिस प्रकार कोई भी सर्वधर्म, सर्वमत, और सर्वसम्प्रदाय सहिष्णु उदारचेता महामना व्यक्ति अपनी सहृदयता, सहिष्णुता सर्वधर्मपरायणता और अनन्य हृदयताके कारण विश्वके किसी भी सार्वभौमिक सर्वधर्म सम्मेलनका सर्वप्रिय और सर्वसम्मतिसे सबका निर्वाचित सभापति होता है उसी प्रकार यह ॐ भी सर्वव्यापक सर्वाधिष्ठान रूपसे सबका मुखिया, और सार्वभौमिक होनेके कारण, सभी नाम, ध्वनि, शब्द, भाषाओं और ब्रह्मके सभी नामोंका मुख्य प्रतीक है!

प्राणके प्रकम्पन वा वायुकी गतिविधिसे तेजका उदय होता है। यह तेज ही अग्नि, उष्णता, गर्मी, विद्युत् वा प्रकाश है। इस प्रकार तेजके रूपमें यह घनीभूत गतिशील वायु वा प्राण, अपनी स्पंदगति वा प्रकंपनसे कंठनाल (ध्वनियंत्र) वा वायुनाड़ीको आहत करता है और वायुकी यह स्पन्दगति हो ध्वनिके रूपमें प्रकट होती है। यह ध्वनि कण्ठ, तालु, मूर्द्धा, जिह्वा, दन्त, ओष्ठ और नासिका आदि विभिन्न स्थानोंमें घूमती हुई वा विचरण करती हुई, देश काल और वस्तु परिच्छेद वा अपने परिमाणके अनुसार विभिन्न रूप धारण करती है, अतएव वर्ण वा ध्वनिके कण्ठ्य, तालव्य, मूर्द्धन्य, ओष्ठ्य, दन्त्य, और सानुनासिक आदि भेद किये जाते हैं। वायु नाड़ी, कण्ठ, तालु, जिह्वा, दांत, ओष्ठ, मुख, नासिका आदि ही ध्वनि वा वाणीका "ध्वनियंत्र" है!

* 'अ' कंठ्यवर्ग है। यह ध्वनि मंत्रका मूलवर्ण शब्द है। यही मूल ध्वनि है, वर्णमालाकी कुंजिका है। 'अ' का उच्चारण कंठ तक ही सीमित है। इसके उच्चारणसे तालुका वा जिह्वा आदिका कोई भी अङ्ग प्रभान्वित अथवा प्रभावित नहीं होता। यह ध्वनि मंत्रके किसी अंगका स्पर्श नहीं करता। 'उ' ओष्ठ्य वर्ण है। "उ" का उच्चारण ध्वनियंत्रके आदिसे अंत्य ओष्ठतक, झंकृत और प्रतिध्वनित होकर गूंज उठता हैं। 'म' ओष्ठ्य और सानुनासिक है। यह "ध्वनियंत्र" के अन्तिम भाग नासिकासे ही प्रकट होता

---

* ॐकाराय शब्दश्च द्वावेतौ ब्रह्मणः पुरा
कण्ठं भित्त्वा विनिर्यातौ तस्मान्माङ्गलिका उभौ।
(अनाध्यायके शान्ति पाठसे)

है। इसकी उत्पत्ति दोनों ओष्ठोंके संयुक्त रूपसे मिलनेपर वा वन्द ओठोंसे ही होती है। 'अ' ध्वनियंत्र' का आदि, 'उ' ध्वनियंत्रका मध्य और 'म' ध्वनियंत्रका अन्तिम "वैखरी" रूप है! इस प्रकार अ, उ, म के रूपमें यह एकाक्षर और संयुक्ताक्षर ब्रह्म ॐ ध्वनियंत्रके आदिसे अन्ततक, (अ से म तक) वाणीके सभी वैखरी शब्द वर्णमाला और ध्वनिका सर्वव्यापी अधिष्ठान है। सभी शब्द, वाणी और ध्वनिका स्वयंसिद्ध "प्रतीक" हैं और स्वतः प्रमाण भी हैं। जितने भी शब्द वा वर्ण वाणीरूपसे संसारकी सभी भाषाओंमें हैं, सभी ॐ से ही आविर्भूत हुए हैं। सवकी जननी ॐ है, प्रणवात् प्रकृतिरिति जनक है। "ॐ मित्येतदक्षरमिदं सर्वं" ॐ ब्रह्म है! ॐ सभी वैखरी शब्द, नाम वा वाणीका जादूभरा, आश्चर्य जनक, अचरजमय और रहस्यपूर्ण दिव्य "ध्वनिसमूह" वा ग्रामो फोन (ध्वनियंत्र) के रूपमें सभी ध्वनियोंका वड़ा "दफ्तर" वा कारखाना है। सभी शब्द, सभी ध्वनियां और सभी भाषायें ॐ से उत्पन्न होती हैं। यही कारण है कि 'तस्य वाचकः प्रणवः' के रूपमें ॐ ही शब्द वा ध्वनियोंका प्रतिनिधि और "मम योनिर्महद्ब्रह्म" वाणी रूप ब्रह्मका मुख्य प्रतीक भी है। ॐ ब्रह्मका प्रकृत रूप है। अखिल विश्वका ही अधिष्ठान है, 'ध्वनि, शब्द, भाषा, और गिरा, अर्थ, रूप, वाणी अन्य सभी विषयोंका मूल सोता वा उद्गम स्थान भी है। अतएव उपासना ॐ की करो, रहो ॐ में, विचरो ॐ में, ध्यानावस्थित हो जाओ ॐ में, ॐ डूब जाओ, निमग्न हो जाओ चिरनिमज्जित हो जाओ ॐ में, ॐ के ध्यानमें और चिर आनन्दित रहो ॐ के ही ब्रह्मानन्दमें !!!

२—"ॐ" की महिमा

इस स्थूल पञ्चभौतिक जगतमें ॐ की जो कल्लोल ध्वनि होती है वह सृष्टिके आरम्भमें, कार्य ब्रह्म (हिरण्यगर्भ) के कण्ठ से जो शब्द (ॐकाराथ शब्दश्च द्वावेतौ ब्रह्मणः पुरा। कंठंमित्वा विनिर्यातौ तस्यान्मांगलिकावुभौ) के रूपमें सबसे पहले निकला था उसकी प्रतिध्वनिमात्र है! अतएव ॐ और अथ ये दोनों ही अत्यन्त महत्वपूर्ण और माङ्गलिक भी हैं।

"वाइविल" में भी कहा गया है कि सृष्टिके आदिमें शब्द था, यह शब्द ब्रह्मके साथ ही था और यह शब्द ही ब्रह्म भी था। In the beginning there was the word, the word was with God and the word was God. यह शक्ति या गतिरूप शब्द ॐ ही है। 'ओंकार रूपः शिवः।' शिव ओंकार रूप है और ओंकार शिव रूप है। अतएव जिस प्रकार शिवमहिम्न स्तोत्रमें कहा गया है, कि यदि सहस्र शीर्ष शेप वा शारदा भी विश्व रूप अश्वत्थ वृक्षको ही लेखनी और समुद्र जलकी स्याही बनाकर इस परम पवित्र ॐ मंत्रकी महिमा वा गुणगान करें तो भी इसका पार नहीं पा सकते, इस परम पवित्र और अत्यन्त रहस्यपूर्ण 'एकाक्षर ब्रह्म' ॐ की महिमामें न जाने 'संस्कृत' के कितने ग्रन्थ भरे पड़े हैं। जितने भी मन्त्र हैं उन सबोंका श्रीगणेश (आरम्भ) ॐ से ही होता है। प्रणव ॐ मन्त्रोंका सेतु है। "मंत्राणां प्रणवः सेतुः।" पंचाक्षर, अष्टाक्षर, द्वादशाक्षर आदि सभी मंत्र बीजरूपसे ॐ में ही सन्निहित हैं। हिन्दुओंके वा आर्य्योंके वेद-वेदान्त आदि सभी धर्मग्रन्थ सूत्र रूपसे ॐ में ही ग्रन्थित हैं। ॐ ही "ममयोनिर्महद्-

ब्रह्म"—सबकी (महद्‌ब्रह्म) योनि है। यह विश्व ॐ से ही उत्पन्न होता है, ॐ में ही स्थित है और महा प्रलयके समय ॐ में ही लीन होता है। सृष्टिका यह गति रूप पसारा ॐ की ध्वनि ही है।

अपनी प्रार्थनाके अन्तमें ईसाई 'अमेन' (Amen) शब्दका प्रयोग करते हैं। ईसाइयोंकी परम पवित्र Holy Bible 'बाइबिल' में इस 'अमेन' शब्दका प्रयोग बहुलतासे किया जाता है। मुसलमान अपनी प्रार्थना वा नमाजमें 'आमीन' कहा करते हैं। यह 'अमेन' और 'आमीन' भी ॐ के रूपान्तर मात्र हैं। ॐ सभी ध्वनियोंकी जननी और जीवनाधार है। किसी भी रोगकी असहाय वा भयंकर पीड़ाके समय हम रह रहकर वा लगातार आंह, ऊंह, हुं, हूं आदिकी रट लगाकर ही क्षणिक शान्ति वा सुखका अनुभव करते हैं। यह आंह, ऊंह, हूं, हूं आदि ध्वनि रूपसे ॐकारके रूपान्तर ही हैं। पीड़ाके कारण ॐकारकी ॐ ध्वनि ही हूं हूं आदिका विकृत रूप धारण कर लेती है। इस प्रकार जब आप रोगग्रस्त होकर दुःखी हो जाते हैं तो ज्ञात वा अज्ञात रूपसे हूं वा हूँ आदि ध्वन्यात्मक नामोंका प्रयोग कर आप भगवानको ही पुकारते और भगवानके अनुग्रह वा दया की ही भीख मांगते हैं। हँसी भी लगातार 'हँ' ध्वनिका ही सामूहिक रूप है।

जब बच्चा रोने लगता है वह भी ऊँ ऊँ की ही ध्वनि करता है उसकी यह ध्वनि भी ॐ का ही रूपान्तर है। बच्चे की वाचा शक्ति वा वाक् इन्द्रियका पूर्ण विकास नहीं होनेके कारण ही वह 'ॐ' का उच्चारण विकृत रूपसे करता है। बच्चा हँसता हुआ

वा रोता हुआ भी ॐ ध्वनिका उच्चारण करता है और अज्ञात रूपसे भगवानका ही नाम कीर्तन करता है। वस्त्र धोते हुए धोबी भी पाट पर कपड़े पटकता हुआ हां, हां, हूं, हूं करता हुआ ही अपनी थकावट दूर करता है और वस्त्र धोनेके परिश्रम वा थकावटको कुछ देरके लिये भूल जाता है। वह अनजानमें भी भगवानका नाम लेता हुआ, हृदयमें बल, साहस, धैर्य, सुख और शान्तिका अनुभव करता है। वायुके विकारसे उदर वा पेटका गों, गों शब्द रेलवे इञ्जिनकी सीटी, नदियों वा झरनोंकी कलकल ध्वनि पक्षियोंकी कलरव उल्का वा वज्रपातकी गड़गड़ाहट, शृगालोंका हुआं, हुआं, सिंहका गर्जन, चक्की, मिल तथा कारखानोंकी 'भों, भों' और हवाई जहाज, मशीनगन, बन्दूक आदिकी सभी ध्वनियां इस ध्वनिके ही विकृत रूप हैं। सभी ध्वनियां ॐ की ही हैं। ॐ के ही अन्तर्गत हैं। पहाड़ वा भूखण्डोंके गिरनेमें हवा और आंधीके चलनेमें, नगर आदिके कोलाहलमें और वर्षाकी रिमझिममें भी ॐकी ही प्रतिध्वनि है। इन उदाहरणोंसे यह प्रकट है कि मनुष्य निरन्तर सर्वकाल— ज्ञात, अज्ञात, पूर्ण वा अपूर्ण रूपसे ब्रह्म वा भगवानके ॐ नामका ही उच्चारण सर्वभावसे कर रहा है। और जब वह भगवानका यह ॐ नाम भाव और श्रद्धासे प्रेमपूर्वक लेता है, तब यही भक्ति वा उपासनाका रूप धारण कर ब्रह्माभ्यासके नाते, "यद्गत्वा न निवर्त-न्ते तद्धाम परमं मम" रूप दिव्य 'आत्मस्वरूप' अथवा स्वस्व रूप-स्थितिका ही मुख्य हेतु होता है।

संसारके सभी वर्णरंगवाले नेत्रोंमें, सभी स्वाद जिह्वामें, सभी स्पर्श सुख त्वचामें, सभी ध्वनियां (शब्द) कर्ण वा श्रोत्रोंमें, सभी

गन्ध नासिकामें, सभी स्फुरण मनमें और मन उस सर्वाधिष्ठान और सर्वाधार परमपुरुष ब्रह्म वा ॐ में सन्निहित है।

मधुमक्षिकाओंकी भनभनाहट, लावा वा कोयलकी सुमधुर कंठ-ध्वनि, संगीतके सातस्वर (स्वरर्गमपि ध्वनि सा) स, र, ग,म, प, ध, नि सा—मृदंग और ढोल वा तवलेकी मनोहर ताल, वीणा, मुरली वा वंशीकी सुमधुर मीठी तान, सिंहका भयंकर गर्जन, विरही वियोगीका प्रेम संगीत, घोड़ेकी हिन-हिनाहट, काले नागका हिस-हिसाना, सांपकी फुँफकार, वक्ताकी वक्तृतापर श्रोतावृन्दकी तालियोंकी गड़गड़ाहट—आदि सभी ध्वनियोंमें ॐकारके ही विविध रूप वा आकार हैं। ॐ वेदोंका आगार है।

सभी ध्वनियां, सभी शब्द, सभी भाषायें ॐ से ही निकलती हैं। चार वेदोंका सार ॐ ही है। ध्वनि रूपसे अखिल विश्व ही ॐ से आच्छादित है। 'अ' जिह्वाके मूल भागसे, 'उ' जिह्वाके मध्य और 'म' ओठोंके वन्द करनेसे जिह्वाके अन्तिम अग्रभागसे उच्चरित होता है। जो इस ॐ का उच्चारण अर्थको समझता हुआ श्रद्धा और भावपूर्वक बड़े प्रेमसे किया करता है वह संसारके समस्त धर्मग्रन्थों का पाठ अथवा स्वाध्याय कर लेता है। विश्वके विभिन्न स्थानोंमें, विविध रूपधारी, विभिन्न नामोंसे जितने भी सम्प्रदाय या मत मतान्तरोंके विविध धर्मग्रन्थ हैं, सवकी महद्ब्रह्म रूप योनि ॐ ही है। ॐ, अमेन, आमीन—हिन्दू, ईसाई और मुसलिम धर्मके ये तीन नाम ब्रह्मा, विष्णु और महेशके 'दत्तात्रेय' रूपकी तरह 'कहियत भिन्न न भिन्न' के ही अभिन्न रूप हैं। यह ब्रह्म वा सत्यका सच्चिदानन्द रूप है। भगवानकी अर्चा या पूजा ॐ से ही होती है।

विना ॐ के पूजा ही नहीं है। ॐ ही सगुण और निर्गुण ब्रह्म है। ॐ ही साकार और निराकार है।

ॐ सर्वश्रेष्ठ मंत्र है। यह सद्यःमुक्ति प्रदान करता है। सभी मंत्रोंका आरम्भ ॐ से होता है। प्रत्येक ऋचाके आदि और अन्तमें भी ॐ ही है। प्रत्येक उपनिषद्का श्रीगणेश ॐ से है। गायत्रीका आदि अक्षर ॐ है। देवताओंको जो अर्घ्य आदि प्रदान किया जाता है उसके आदि वा अन्तमें भी ॐ ही है, देवताओंकी अर्च्चा अर्थात देवार्च्चणमें जो अष्टोत्तरी, त्रिशती और सहस्रनाम आदिका कीर्तन होता है वह भी आदिमें प्रणव अर्थात् ॐ के प्रयोगसे होता है। ॐकारकी महिमा ही अपार है। इसका वर्णन कौन कर सकता है? देवताओं और मनुष्योंकी कौन कहे सहस्रमुख शेष और ॐकार रूप शिवकी 'शिवप्रिया'—पार्वती भी इस प्रणव रूप तारक मंत्र ॐ का गुणगान करती हुई थक गयीं। सभी ध्वनियां ॐ रूप हैं।

अखिल विश्वको ही आध्यात्मिक ज्ञान वा ब्रह्मविद्याका अभय दान अथवा संसार रूप विश्व ब्रह्मकी इस विराट हाटमें अध्यात्म-विद्याका ही व्यवसाय करने वाले सभी संन्यासियों वा वेदान्तियोंका निर्गुण और सगुण रूपसे त्रिगुणातीत और त्रिगुणात्मक—विश्व व्यापी तिरंगा झंडा ॐ ही है। संन्यासियोंके शान्ति निकेतनका अनिकेत आश्रम वा निवास स्थान ॐ ही है। ईश विनय, स्तुति, वा प्रार्थनामें भगवानको प्रेम पूर्वक पुकारनेका एक मात्र सहारा ॐ ही है। किसी भी व्यक्तिके श्रेय वा कल्याणके लिये ईश विनयप्रभृति वा शरणागतका एक मात्र तत्क्षण फलदेनेवाला क्रियात्मक और गतिशील साधन ॐ ही है। प्रणव ॐ की यह शक्ति रूपा, परा ध्वनि अपने

उच्चारण मात्रसे ही जिसके निमित्त इसका प्रयोग किया जाता है, उस पर अपनी 'अभय मुद्रा' का ईश्वरानुग्रह रूप श्रेष्ठवर तत्काल ही प्रदान करता है। इन दिनों ॐ के उपासक तो अपने पत्र व्यवहारमें भी ॐ का ही प्रयोग 'आदौ गणपतिं वन्दे' के रूपमें किया करते हैं और संन्यासियों वा ॐ की उपासना करनेवाले सभी प्रवृत्ति या निवृत्ति परायण भक्तों वा गृहस्थोंकी कुटियों, अट्टालिकाओं और राजकीय प्रासादों वा महलोंकी दीवालों और शिखरों पर भी ॐ का ही चिन्ह अंकित रहता है।

३—ॐ जपकी उपयोगिता

ॐ जप और ॐ ध्वनिके आश्चर्य्यजनक परिणामोंका अपूर्व अनुभव आत्म साक्षात्कार प्राप्त प्राचीन ऋषियों और महर्पियोंने किया था। उन्होंने चिरकालतक ॐ जप और इसकी ध्वनिका अनुसन्धान और अनुभूत प्रयोग करनेके वाद ही ॐ का ध्यान दीर्घकाल पर्यन्त किया था और तव अपनी सिद्धावस्था प्राप्त कर लेने पर ही अखिल विश्वको ही ब्रह्मका परिचय 'तस्य वाचकप्रणवः'—ॐ के रूपमें दिया था। यह जादूगरका अंडवंड जादू वा अंटसंट काम नहीं है। यह मंत्रद्रष्टा ऋषियोंका आप्त वाक्य है उनके लिये ॐ ही संसार समुद्रके अत्यन्त गम्भीर, भयंकर 'दुस्तर' अथाह और सघन जलराशिकी तरणी थी और संसार सागरके पथप्रदर्शक प्रकाश वा दीप स्तम्भकी आलोक रेखा भी थी। उनके लिये ॐ ही ब्रह्मज्ञान, आत्मसाक्षात्कार अथवा निर्विकल्प समाधि के हिमगिरि

शिखर पर चढ़नेकी निसेनी थी। हम सभी उनके आप्त वाक्य वा उपदेशों पर पूर्ण रूपसे निर्भर कर सकते हैं।

इस ॐ की अत्यन्त आश्चर्य्य पूर्ण रहस्यमयी अचिन्त्य शक्ति है। प्रणवकी यह ॐ ध्वनि अपनी पराशक्तिकी अपार महिमासे ही माया या अविद्याके आवरण पंच कोशोंका अतिक्रमण कर वासना, इच्छा, कामना, तृष्णा मनकी संकल्प-विकल्प-रूपस्फुरणा और अहंकृतिका भी नाश करती और साधकको ब्रह्मसे मिला देती है। सत्वगुण सम्पन्न मनकी ब्रह्माकार वृत्तिको पुष्ट करती मूलाज्ञानको समूल नष्ट करती और ध्यानाभ्यासीको सच्चिदानन्द स्वरूपमें ही स्थित करती है। प्रणव ॐ आधिभौतिक वा सांसारिक जीवनके अथाह और अनन्य भवसमुद्रमें अचेत पड़े हुए मोहासक्त जीवोंके लिये एक प्रकाशमयी नौका है। पता नहीं संसार समुद्रको इस नौका पर कितने पार कर गये। यदि चाहें तो आप भी सहज ही पार कर सकते हैं। अर्थ सहित भाव और श्रद्धापूर्वक निरन्तर ॐ का ध्यान करते हुए आत्मा की प्राप्ति कर लें। ॐ की ध्वनि मोक्षकी वह निसेनी है जो साधककी तुरीयावस्था वा 'शान्तंशिवमद्वैतं' के उच्चतम शिखर और 'सत्यं, शिवं, सुन्दरं' के आत्यन्तिक सौन्दर्य पर ही ले जाती है। ॐ का यह ध्यान साधकके लिये आत्मानु-संधानका दिव्य पथ प्रदर्शक वना हुआ अध्यात्म व अन्तर्जगतके अन्तर्तम रहस्योंका दिग्दर्शन कराता है। ॐ का ध्यान साधकको दिव्यचक्षु, जीवन्मुक्ति, अमृतत्व, अभय, नित्य, सुख, शान्ति और दिव्य शक्ति प्रदान कर उसकी कायापलट ही कर देता है। यह साधकको जीवन्मुक्त वना कर ही छोड़ता है।

अब तो विज्ञान भी यह सिद्ध कर चुका है कि रेडियो (ध्वनि) एक सेकेण्डमें पृथ्वीकी सात परिक्रमा करती है। क्या यह आश्चर्य नहीं है ? क्या कभी आपने इस रहस्यपूर्ण ॐ ध्वनिकी आश्चर्यमयी शक्तिका अनुमान भी किया है ? यदि विज्ञानका यह उपर्युक्त सिद्धान्त यथार्थमें ऐसा ही हो तो इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि यह अखिल विश्व एकाक्षरब्रह्म ॐ की ध्वनिसे ही आच्छादित है। मैं अपने व्यक्तिगत अनुभवसे कह सकता हूं कि ॐ की ध्वनिने लंदनके Guy (गाई) और Barthlomeo बार्थलोमियो अस्पतालमें अति भयंकर रोगोंसे पीड़ित रोगियोंको भी सान्त्वना सुख और शान्ति प्रदानकी है और डवलिनके सुप्रसिद्ध (Rotunda) रोटंडा मातृसदनकी माताओंका भी परम उपकार किया है। भारत-वर्षके देहरादून ; चिंगलपेट और मद्रास स्थित सुप्रसिद्ध चिकित्सा-लयोंके कुष्ठ रोगियोंको भी ॐ की ध्वनिसे विशेष लाभ हुआ है, सुख और शान्तिकी प्राप्ति हुई है। और समस्त संसारके ही आरोग्यार्थी स्वास्थ्य कामियों की सूखी नाड़ियोंमें भी जीवनी शक्तिका संचार हुआ है। बंगाल और मद्रासकी सहस्राधिक बाल विधवायें चिरसुखी हुई हैं। इसने दुःख और निराशा की ही गोदमें पड़े हुए कितने हतभाग्य पददलितोंका उद्धार किया है। समस्त संसारकी ही निःस्वार्थ सेवा करनेवाले देशभक्तोंको आत्मबलसे संयुक्त किया है। भारतके भावी भाग्यविधाता और अखिल विश्वके आशा केन्द्र 'नवयुवक' वृन्दके नवीन उत्साहसे परिप्लावित और उत्कण्ठित हृदयोंको दिव्य जीवनके ही अमोघ बल, वीर्य और अपरिमेय पराक्रमसे परिपूर्ण किया है। मनुष्य मात्रके मानस पटल,

चित्त और कारण शरीरमें कषाय रूपसे स्थित सूक्ष्मातिसूक्ष्म मलिन संस्कारोंको निर्बीज किया है। यह कोरी गप नहीं है। मिथ्या स्तुति वा अतिशयोक्ति भी नहीं है। यह सच्ची वस्तुस्थिति है। मेरे प्यारे सुहृद् पाठको ! मैं जो कुछ लिख रहा हूं इसपर श्रद्धा लाओ और दृढ़ विश्वास रखो। कहो क्या आप इस प्रकार अनुभावित और अनुप्राणित होनेके लिये सर्वथा तैयार हो ? शिव आपके हृदयोंको ॐ ध्वनिके—'अविच्छिन्न तैल धारामिव दीर्घघण्टा-निनादवत्'—दीर्घ घंटा निनादसे ही भर देगा।

आप जानते हैं कि किसी भी यज्ञमें किसी प्रकारकी भी कोई त्रुटि हो जाती है तो उसकी पूर्तिके लिये यज्ञके अन्तमें इस अनन्त शक्ति सम्पन्न ॐ मंत्रका उच्चारण ही किया जाता है। यज्ञ, योग, स्वाध्याय, अनुष्ठान, जप, ध्यान आदि जितने भी धर्मकृत्य हैं, सबका आरम्भ ॐ की सुदीर्घ ध्वनिसे ही होता है। याज्ञिक आदि सभी यज्ञकर्ता ॐ का ध्यान और ॐ का उच्चारण वा ॐ का जप विविध विघ्न-बाधाओंकी निवृत्ति और यज्ञकी पूर्ण सफलताके लिये किया करते हैं।

भगवान कृष्णकी बांसुरी हमें क्या सिखाती है ? भगवान कृष्णने हाथोंमें बासुरी ही क्यों ली ? बांसुरीका मुख्य रहस्य क्या है ? कृष्णकी यह वंशी ॐ का ही प्रतीक है। वंशी कहती है, मेरी ही तरह अपनेको अहंकृतिसे शून्य (खाली) कर दो। कृष्ण आपकी देहमें वंशीका स्वर फूंकेंगे। आप कृष्णकी वंशी बन जायेंगे। आपकी यह देह वंशी बनकर 'ॐ' का सुमधुर राग अलापेगी। आपकी देह ही वंशीकी तान सुना देगी। 'कृष्ण' की सुमधुर संकीर्तनध्वनिसे

गूंज उठेगा। अतएव एक मात्र सहारा ॐ का ही लें, आश्रय ग्रहण करें प्रणव ॐ का ही, ॐ का ध्यान करें। कृष्णकी वंशी बनी हुई चिन्तन देहमें ही आप लीन हो जायेंगे। आत्मसंगीतकी "ॐ" की मनोहारिणी सुमधुर ध्वनि श्रवण करनेका दृढ़ अभ्यास करें और शान्तिके परम रम्य आराममें ही चिर विश्राम करें। उपनिषदोंमें ब्रह्मकी उपमा 'हंस' (पक्षी) से दी गयी है। एक योगारूढ़ योगी, जो ॐ का ध्यान कर "हंसारूढ़" हो जाता है, करोड़ों पापों अथवा कर्म संस्कारोंमें लिप्त नहीं होता। जो प्रातःकाल ॐ का जप करता है वह रात्रिकृत पापोंसे मुक्त होता है, जो रात्रिको ॐ जप करता है वह दिनके सभी पापोंसे छूट जाता है। जो प्रातः और संध्या काल प्रणव जपका अभ्यास करता है वह सभी पापोंसे मुक्त हो जाता है, यशः मुक्ति प्राप्त करता है, सभी वेदोंके स्वाध्याय और पाठका अक्षय पुण्य प्राप्त करता है और पञ्च महापापोंसे भी छूट जाता है। ब्रह्मके ॐ नाम अथवा प्रतीक रूप एकाक्षर ब्रह्म ॐ की महिमा ही ऐसी है। यदि आप भी इस ॐ नामकी महिमा पर अटूट विश्वास और अविचलित श्रद्धा रख सकें तो संसार के जन्म, मरण वा आवागमनके रूप सुदृढ़ बन्धनसे भी सदाके लिये मुक्त हो जायेंगे और निरन्तर आत्म स्वरूपमें स्थित रहेंगे। किसी भी धर्मकृत्य अथवा अध्यात्म यज्ञके आदि, मध्य और अन्तमें ॐ मन्त्रका उच्चारण करनेवाला सफल मनोरथ हो पूर्ण "सिद्धि" प्राप्त करता है और श्री, विजय, विभूति और नीति उसकी चेरी बनकर रहती हैं।

४—ॐ क्या है ?

ॐ आकाश ब्रह्म सर्वव्यापी वह शब्द है जो ब्रह्मके कण्ठसे कल्लोल ध्वनिके रूपमें सबसे पहले निकला था। ॐ की यह ध्वनि ही सृष्टिकी जननी है। ॐ सृष्टिकालकी इस ध्वनिका साधन वा सामूहिक रूप है, यह सब ॐ ही है। ॐ रहस्य पूर्ण शक्तिपुञ्ज है। ॐ आश्चर्यमयी शक्तियोंका जादू भरा शब्द है। ॐ सबका अधिष्ठान और आश्रय स्थान है। जिस प्रकार किसी भी देशका राजा अथवा सभापति अपनी प्रजा अथवा देशवासियोंके विचारों का प्रतिनिधि रूप है उसी प्रकार ॐ भी सभी नाम और ध्वनियोंका मुख्य अधिष्ठान होनेके कारण ब्रह्मके सभी नाम वा ध्वनियोंका प्रतीक है। संसारके सभी शब्द इस ॐ ध्वनिके अन्तर्गत हैं। ॐ सभी ध्वनियों वा शब्दोंका चक्रवर्ती सम्राट है, ॐ महासमुद्र है जिसमें नदियोंकी तरह शब्द, नाम और ध्वनियां अपने नाम और रूपका विसर्जन कर देती हैं।

ॐ समस्त सृष्टिका ही सामूहिक रूप है। ॐ गुरु शब्द है। ॐ हिरण्यगर्भकी वाणी है ! ॐ वेदोंकी माता है ! ॐ सभी ध्वनियोंकी जीवन मूरि है ! ॐ विश्वकी महाध्वनि है ! ॐ सृष्टिकी आदि ध्वनि है ! ॐ ज्ञान योगके जिज्ञासु विद्यार्थी का अमूल्य शब्द भण्डार है ! ॐ वेदान्तियोंका (वेदान्तवेद्य) "वेदान्त प्रमाण" है ! ॐ अभय और अमृतत्व रूप आत्मा वा "ब्रह्म" की प्राप्तिके लिये आत्मज्ञानकी नौकापर (उस पार) जानेका "प्रमाण पत्र" है।

ॐ आत्माकी अमृतात्मा है ! ॐ शिखर स्थित शिखर शशिशेखर—(चन्द्रशेखर) है। ॐ भयङ्कर रोगका सर्व पापहर

ब्रह्मशर है। ॐ अमृतत्व प्रदान करनेवाली श्री सीताजीकी दिव्य खीर है। ॐ तीर्थराज प्रयाग और त्रिकूट (त्रिकुटि-स्थित) परम पवित्र "त्रिवेणी संगम" है। ध्यान ॐ का करें चिर निमग्न हों ॐ में। गोता लगायें ॐ में। ॐ संसारके "दावानल" को बुझानेका— "सर्वात्मस्पनं पर विजयते श्रीकृष्ण संकीर्तनम्" रूप परम पवित्र स्थान है!

ॐ सृष्टिका पसारा है, और दृश्य जगत्के विविध "नाम-रूप" दृश्य इस कोरे कागजपर अङ्कित होनेवाले विविधि चित्र हैं। ॐ के रूपमें सृष्टिका यह वस्त्र वा पट रूप पसारा 'सत्' पर इस वस्त्र वा पट पर अङ्कित चित्र 'असत्' है। इस पट वा वस्त्रकी चित्राङ्कित अग्नि शिखा आपकी उंगलियोंको जला नहीं सकती। चाकू वा तलवारका चित्र उंगलियोंको काट नहीं सकता, वस्त्र वा पटका चित्राङ्कित सिंह आपको फाड़ नहीं सकता। इसी प्रकार अध्यात्म जगत्में भी एक मात्र सत् ब्रह्म वा ॐ है। नाम और रूप पटके चित्रोंकी तरह 'असत्' है।

यह ॐ अथवा आत्मा ही सब नाम, ध्वनि, भाषा, शब्द, वाणी, पिण्ड और ब्रह्माण्ड, देह, मन. प्राण, स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीर, पंचकोष आदि "सर्व" का अधिष्ठान है। जिस प्रकार 'अन्तस्तल' ही सबका सार वा रहस्य रूप वह अन्तिम स्तर है जो सभी गुणोंका अधिष्ठान है, उसी प्रकार ॐ वह "मूल तत्व" वा वस्तुत्व है जिसके अन्तर्गत समस्त नाम रूप विषम (संसार) समुद्र तरङ्गवत् दृष्टि गोचर होता है। ये सभी तरङ्ग दृश्य वा प्रतीति मात्र ही है। इसी प्रकार यह नाम रूप (दृश्य) भी प्रतीति मात्र

मिथ्या है। यह नाम रूप (दृश्य) असत् है ! यह नाम रूप (दृश्य) एक-सा कभी नहीं रहनेवाला, अनित्य और परिवर्तनशील है अतएव सदा अखण्डैकरस रहनेवाले अखण्डैकरस उस सत्यकी अपेक्षा अपेक्षित सत्यके रूपमें ही असन् कहा जाता है। "गिरा अर्थ जल वीचि सम" समुद्र सत् पर तरङ्ग वा वीचि असत् है। इसी प्रकार ब्रह्म वा ॐ सत् और उसका यह पसारा (सृष्टि) असत् है। "आत्मा" अथवा एकाक्षर ब्रह्म ॐ के रूपमें ॐ एकपदी वा एकाक्षरी मंत्र है।

'ब्रह्म' नामका पूर्ण निरूपण करनेके लिये यावत् शब्दोंका साररूप "प्राणस्य प्राणः"—प्राणोंका भी प्राण—यह प्रणवरूप ॐ ही है। ॐ जीवमात्रको संसार सागरसे तारनेवाला तारक मंत्र है। ब्रह्म ही (त्राण करनेवाला) "तारक" है। उपासना इस तारक मंत्र ॐ की ही करनी चाहिये।

ॐ ही वेद और वेदान्तका सार है। ॐ उपनिषद्रूप सुतरुवर-का सर्वश्रेष्ठ फल है। ॐ वेदान्त कुसुमाकरकी सुमधुर माधवी लता है। ॐ अखिल विश्वका ही मूल है। 'जो सींचे मूलको फूले फले अघाय।' ॐ ही अक्षर ब्रह्म है। ॐ सभी ध्वनियों, उच्चारणों और भाषाओंका उद्गम स्थान है। ॐ ब्रह्मका सर्वश्रेष्ठ मुख्य नाम है। ॐ अमृतात्मा ब्रह्मका सर्वरूप प्रतीक है। ॐ शक्ति पुंज है। ॐ पराशक्ति है। ॐ प्रणव है। ॐ वेदोंका एकाक्षर ब्रह्म है। ॐ उद्गीथ है। ब्रह्म अपने जिन तीन रूपोंमें प्रगट होता है, "ॐ" अ, उ, म रूपसे ब्रह्मा, विष्णु और महेश इन तीन रूपोंका प्रतीक पृथक्-पृथक् समरूपसे ही है।

ॐ ही शक्ति है। ॐ ही अधिष्ठान है। ॐ ही "एक प्रत्यय सार" ब्रह्म है। ॐ अमृतात्मा है। ॐ बाइबिलका Holy Ghost "होली घोस्ट" (प्रत्यगात्मा) है। ॐ अन्तर्तम (आत्मा) का अन्तर्तम संगीत है। ॐ शान्तिका सुमधुर स्वर है। ॐ उपनिषदों-का "नवनीत" है। ॐ "वेदान्तवेद्य. नवनीत चोर" कृष्ण है। ॐ वेदोंका मुकुटमणि "हीरा" है। ॐ वेदान्तकी हिमगिरि शिखाका अत्यन्त उच्चतम्—"श्रीगौरीशंकर" का हिमशिखर है।

'वचन अगोचर बुद्धिपर' श्रीरामका वह 'परम रम्य आराम' और 'यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम' जहां जाकर फिर संसारमें लौटना नहीं पड़ता ब्रह्मका वह परम धाम, जहां भूख, प्यास, दु:ख, शोक, हर्ष, विषाद, हम, तुम, यह, वह, आज, कल, यहां, वहां, पूर्व, पश्चिम, इधर, उधर, ऊपर, नीचे आगे, पीछे, वर्ण, ध्वनि, ज्योति, नभ, प्रकाश, अन्धकार, द्रष्टा, दृश्य कुछ भी नहीं है वह ॐ ही है।

ब्रह्मका वह शाश्वत स्थान, जहां 'परं शान्ति' के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है, ब्रह्मका वह अपार सौन्दर्य अनिर्वचनीय गौरव, अवर्णनीय, अपरिमेय, अग्राह्य, अदृष्ट्य और अचिन्त्य शान्तंशिव-मद्वैतं' सबका 'प्रपंचोपशमं', 'एकात्मप्रत्ययसारं' जिसे पाश्चात्य तत्व-विद् मूलवस्तुके नामसे पुकारते हैं," जहांसे वाणी मनसहित लौट आती है, जहां संकल्प, कल्पना वा स्फुरणारूप मनोगत भावोंका ही अभाव हो जाता है जहां बुद्धि भी थक जाती है, और इन्द्रियां निरिन्द्रिय हो जाती हैं, ॐ ही है।

यह ॐ ही है। (ओमित्येतत्)। ॐ ही श्रेष्ठ अवलम्बन है। 'एतदालम्बने श्रेष्ठमेतदालम्बनेपरम्।' शुद्ध कामनावाला अपने मनको

आत्मामें लगानेके लिये ॐ का आश्रय ग्रहण करे। ॐ ही आत्मा है। ओ३मित्येतदक्षरमिदंसर्वं। ॐ मित्येकाक्षरं ब्रह्म। ॐही ब्रह्म है; यह सब ॐ ही है; "ॐकार एवेदं सर्वमोंकार एवेदं सर्वम्" आदि श्रुतियां अन्य प्राप्ति अथवा ब्रह्मसाक्षात्कारके लिये ॐ की ही उपयोगिता और महिमाका गुणगान मुक्त कण्ठसे कर रही हैं। श्रुतियां-यह स्पष्ट ही कह रही हैं कि ॐ, ब्रह्म वा आत्मा यह सभी एक ही हैं। "सर्वह्येतद्ब्रह्मायमात्मा ब्रह्म सोऽयमात्मा'; एकं सद्विप्रा। बहुधा वदन्ति।" एकमात्र सत्य ॐ ब्रह्म अथवा आत्मा ही है। विद्वान एक सत्यको ही विविध नामोंसे पुकारते हैं।

इस प्रकार श्रुति वाक्योंसे भी यह सिद्ध है कि ॐ ही ब्रह्मका प्रकृत नाम और प्रतीक भी है। ॐ नामका जप संकीर्तन वा ध्यान मनको निर्मल करता है, अज्ञान या अविद्याके आवरणका नाश करता है और साधकके "ब्रह्मलीन" होनेमें सहायता करता है।

समस्त्र मंत्रोंके आदिमें ॐ ही है। सभी उपनिषदोंका "अथ" वा आरम्भ ॐ से होता है। धर्मके सभी सिद्धान्त ॐ में निहित हैं। श्वासकी ध्वनि ॐ है, ॐ 'भूमा' का अमृत गान है। ॐ का चिन्तन मनको विकसित और उन्नत करता है। ईसाई और हिब्रू अपनी प्रार्थनाके अन्तमें 'अमेन' शब्दका प्रयोग करते हैं, जो ॐ का ही रूपन्तर है। मुसलमान भी नमाजके अन्तमें 'आमीन' कहा करते हैं यह भी ॐ का ही विकृत रूप है। मांडूक्य, मुंडक, छांदोग्य प्रश्न और कठोपनिषद, श्रीमद्भगवद्गीता और ब्रह्मसूत्रोंमें भी ॐ की ही महिमा गायी गयी है। अब तो अमेरिका और यूरोपवाले भी ॐ का ध्यान करते हैं। ॐ की महिमाको वे भी समझने लगे

हैं। पाठको ! ॐ ही आपका जीवन है, ॐ ही आपका प्राण है। ॐ ही श्वास है। ॐ ही वेदोंका जीवनसर्वस्व है। ॐ सभी मंत्रों-का मूलमंत्र है। ॐ इस विश्वका जीवनाधार है। ॐ ही सब कुछ है। ॐ सार्वभौमिक मंत्र है। ॐ सर्वसाधारणकी पैतृक सम्पत्ति है। संसारके सभी अर्थ ॐ में ही सन्निहित हैं। 'ॐकाररूप' शिव-की शिवप्रिया (पार्वती) और चतुर्मुख ब्रह्माकी वेदमाता गायत्री वा सरस्वती भी ॐ की स्तुति वा महिमा सुचारु रूपसे नहीं कह सकतीं। ॐ की महिमा अवर्णनीय, अपार है। संसारके सभी सिद्धान्त, सम्प्रदाय, मत वा पंथके विभिन्न देवताओंका प्रतीक ॐ ही है। यह सर्वसाधारणका ही उपास्य देव है और सबको इसकी उपासना समरूपसे करनी चाहिये। किसीको किसी प्रकारकी आपत्ति नहीं होनी चाहिये। यह सर्वमान्य है। जिस प्रकार रज्जु-सर्प न्याय वा रज्जु-सर्पकी भ्रान्तिमें, सर्पका आधार रज्जु है उसी प्रकार मन, प्राण, इन्द्रिय, और शरीर (भाव) का आधार ब्रह्म है और सभी "वाचारम्भम् नामधेयं" रूप नाम वा वाणीका आधार ॐ है। भगवती श्रुति कहती हैं, जो कुछ है वह नामका ही पसारा है, नामका ही खेल है। 'नामैव सर्वम्।' जो कुछ है वह वाणीके धागेमें मणिगणोंसे ग्रथित है, मणियोंकी तरह गुँथा हुआ और नामकी डोरीमें ही पिरोया हुआ है। किसी भी वस्तु वा विषयका ज्ञान वा अनुभव शब्द वा वाणीसे ही होता है। वाणी वा शब्दके परे कुछ भी नहीं है। नाम और रूप दोनों ही अविच्छिन्न हैं। "गिरा अर्थ जल वीचिसम" भाव और भाषा भी 'कहियत भिन्न न भिन्न' अभिन्न हैं। जितने भी कार्य हैं सब नाम मय वा 'नाम' रूप ही हैं। जहां-

तक अनुभवका विषय है, वहांतक दृश्य जगतके रूपमें अखिल विश्व ही नामके आधारपर स्थित है। जहांतक मन, वाणी वा बुद्धिका विषय है अथवा 'गो गोचर जहँ लग मन जायी'—वह सब नामहीके अन्तर्गत हैं। किसीको भी हम 'नाम' के बिना नहीं पुकार सकते। भाव भी नामसे ही व्यक्त होते हैं। किसीको भी पुकारिये, नामका ही आश्रय लेना होगा। इसमें सन्देह नहीं कि "सर्वं खल्विदं ब्रह्म नेह नानाऽस्ति किञ्चन"—जो कुछ है सब ब्रह्म ही है ब्रह्मके अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं है, तथापि हम केवल ब्रह्म, ब्रह्म, ब्रह्म, की रट लगाकर ही इस संसारमें अपने भावोंको प्रकट नहीं कर सकते। प्यास लगनेपर "गोविन्द, पानी दो" की जगहपर "ब्रह्म, ब्रह्म, ब्रह्म, ब्रह्म" का ही प्रयोग करनेसे प्यासकी निवृत्ति नहीं हो सकती। कोई भी नाम ॐ से पृथक् नहीं किया जा सकता। नाम और नामीमें कोई भेद नहीं! अतएव "सर्वं ॐ मयम्" जो कुछ है सब ॐ ही है। ॐ मुरली मनोहर गोपिय-वल्लभ राधेश्यामकी सुमधुर मुरली ध्वनि है, ॐ गीतावक्ता श्रीकृष्णका गीतावाला ज्ञान हैं, ॐ गोपियोंको मुग्ध करनेवाली वंशीकी मीठी तान है, ॐ "राधारानी के नाम समेतं कृत संकेतं वादयते मृदु वेणु" का ही सुमधुर संकेत है।

और ॐ ही 'हरे हरे वांसकी हरी हरी छड़ी लिये, हरि हरि पुकारतीं हरी हरी लतानमें हरिकी हरे वांसकी वांसुरी भी है।

५—ॐ शब्दकी योजना

सभी आरम्भ किये जाने योग्य वर्ण वा अक्षरोंके प्राण 'अ' 'उ' और 'म' ही हैं। व्याकरणमें सन्धिके अनुसार अ और उ दोनों मिल कर ओ बन जाते हैं। अतएव ॐ का ठीक रूप अ+उ+म ही है। इस एकाक्षर ॐ का 'अ' विराट रूप स्थूल जगतका,'उ' हिरण्यगर्भ-रूप कार्य ब्रह्मका और'म' ईश्वररूप कारण ब्रह्मका प्रतीक है। सिक्ख मतने भी एकसत् नाम ॐ कारके नामसे ॐ को अपना ध्येय माना है, जिउ (यहूदी) इसे ही 'जेहोवा' मुसलमान अल्लाह, जोरास्त्री, अहुर्मजदा, पार्सी हनोवा, ईसाई इलोहेम (इल्हाम) चीनी टाओ और ग्रीक मोनाउ नामसे पुकारते हैं। शरीरका जीवन श्वास वा प्राणरूप होनेके कारण इसे "प्रणव" कहते हैं। प्रणव ॐ शरीरमें प्राणरूपसे अनुप्राणित है।

अ, उ, म रूपसे विभक्त हो जानेपर ॐ का अ, जाग्रत उ, स्वप्न, और म सुषुप्तिका द्योतक है और एकाक्षर ॐ के रूपमें इन तीनोंके परे चतुर्थावस्थाका तुरीय रूप है—मांडूक्यो०। ॐ जप या संकीर्तनकी जादू भरी ध्वनि 'मन' को हठात् वशीभूत करती और शान्ति प्रदान करती है। ॐ की ध्वनि, ॐ का जप वा ॐ का ध्यान मनोजप जगतकी सूक्ष्म देहमें प्रकम्पन उत्पन्न करता और मनको "सत्यं, शिवं, सुन्दरं"के अन्यतम सिंहासनपर आरूढ़ करता हुआ जीवको चतुर्थावस्था रूप 'तुरीय' पदपर अभिषिक्त करता है जहां साधक अपने व्यष्टिरूप व्यक्तित्वको समष्टिरूप ब्रह्म वा आत्माकी विश्व-व्यापी चेतनसत्तामें ही विलीन कर स्वस्वरूपमें स्थित होता है।

जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति और तुरीय इन चार अवस्थाओंके अनु-रूप ही विश्व और विराटमें भी इस रहस्यमय एकाक्षर ब्रह्म ॐके चार "पाद" हैं। सोऽयमात्मा चतुष्पात्।

ॐ नित्य अविनाशी, अक्षर शाश्वत ब्रह्म है। ॐ जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति तीनोंका ज्ञाता (जाननेवाला) और भोक्ता (भोगने-वाला) है। ॐ समस्त विश्व (दृश्जात) का ही प्रतीक है। प्रकृति प्रणव रूप है और प्रणवसे ही उत्पन्न हुई है। प्रणवात् प्रकृतिरिति। अ, उ, म रूपमें ॐ का अ (जागरितस्थानो वैश्वानरः) जाग्रत और विश्वरूप स्थूल जगतका, उ (स्वप्नस्थानस्तेजसः) स्वप्न और सूक्ष्म जगतका और म (सुषुप्तस्थानः प्राज्ञो) सुषुप्ति और अगोचर बुद्धिपर (आवाङ्मनोगोचर) जो कुछ भी अव्यक्त वा अदृष्टरूपसे है उस 'प्राज्ञ' स्थानमें है।

ॐ के अ, उ, म और अर्द्धमात्रा ये चार पाद हैं, अर्द्धमात्रा ध्वनि वा स्पन्दरूप होनेके कारण अनिर्वचनीय है। मांडूक्यो-पनिषद्का सार भाग यही है कि मोक्षका भी जिज्ञासुको विश्व और विराटकी ब्रह्मात्मैक्यता (लयचिन्तन) 'अ' में तेजस और हिरण्यगर्भकी 'उ' में आनन्दमय प्राज्ञ वा ईश्वरकी और 'म' में तुरीय अथवा शुद्ध ब्रह्मकी ॐ की गति-रूप अर्द्धमात्रामें करनी चाहिये। ये सभी विविध उपाय, साधकको दृश्य जगत वा सगुण व्यक्तके भी परे त्रिगुणातीत, त्रिदेहातीत और त्रिकालातीत परम तत्त्वकी प्राप्तिके लिये साधन रूपसे ही बताये गये हैं। अतएव अनन्त शक्ति सम्पन्न ब्रह्मके विविध समष्टि रूप तदनुरूप विविध व्यष्टि रूपमें प्रतीक रूपसे रखे गये हैं। इस प्रकार व्यक्तिविशेषका

आनन्दमय व्यष्टि रूप ही समष्टि विराटका 'ईश्वर' रूप है।

'अ' ब्रह्म, 'म' माया और 'उ'—'अ' और 'म' दोनोंको मिलानेवाली उभयात्मिका क्रियाशक्ति है। 'अ' और 'उ' ये दो अक्षर विष्णु वा ॐ रूप हंस (पक्षी) के दो पंख (पक्ष) हैं, जिसकी गति सहस्रभग वा सहस्ररश्मि भगवान भुवन भास्करके सूर्यलोक वा स्वर्गलोगतक है। सत्त्वगुण सम्पन्न सभी देवताओंका निवास एकाक्षर ब्रह्म ॐ हीके हृदयमें है। 'अ' इस ॐ रूप हंसका दक्षिण (दाहिना) एवं 'उ' वाम (बायां) पंख है। 'म' इसकी पूंछ है और सिर अर्द्धमात्रा है। 'अ' से जाम्बवान रूपमें ब्रह्मा, 'उ' से हरिनामधारी उपेन्द्र और 'म' से हनूमान वेशमें शिवका आविर्भाव प्रत्येक कल्पमें हुआ करता है। ॐ तत्त्वमसि महावाक्यका प्रतीक है। 'अ' जीव और 'म' ईश्वरस्थानीय हैं और उ' जीव और ईश्वरस्थानीय है और जीव और ईश्वरका आत्मैक्यरूप ऐक्य स्थापित करता है।

'अ' पुरुषस्थानीय पिता 'उ' स्त्री स्थानीय माता और 'म' अपत्य स्थानीय पुत्र है। 'अ' अहं (मैं) 'उ' यह और 'म' नहीं हूं के रूपमें यह नहीं हूं "अहं एतत् न" अथवा न मैं यह हूं, न मै वह हूं, न मैं कुछ नहीं हूं, रूप नेति, नेति (न+इति न+इति) का द्योतक है। अर्थात् ॐ नाम और रूपके अतिरिक्त जो सर्वकालमें सर्वत्र है, था और रहेगा, आदि मध्य और अन्तमें और इन तीनोंके परे त्रिकालातीत रूपमें भी है, था और रहेगा। वह अखण्डैकरस चिन्मय सच्चिदानन्द स्वरूप "आत्मा" वा ब्रह्म ही है।

ॐ के आठ अवयव रूप अङ्ग हैं। प्रथमाक्षर 'अ' द्वितीय 'उ' तृतीय 'म' चतुर्थ विन्दु (०) पञ्चम नाद, षष्ठम् कला, सप्तम् कलातीत

और अष्टम सबके परेका सर्वरूप है। इस प्रकार अकार, उकार, मकार अर्द्ध मात्रा, नाद, विन्दु, कला और शक्ति ये प्रणव ॐ के आठ अवयव हैं।

ॐ सगुण, निर्गुण, साकार और निराकार है। ॐ त्रिपुटीरूप है। ॐकी महिमा अपार है। इसका जप और चिन्तन (स्मरण) मनसे करना चाहिये।

अ	उ	म
ब्रह्मा	विष्णु	शिव
विराट	हिरण्यगर्भ	ईश्वर
विश्व	तैजस	प्राज्ञ
सरस्वती	लक्ष्मी	दुर्गा (पार्वती)
पिता (father)	पुत्र (son)	आत्मा (holy ghost)
रज	सत्व	तम
देह	मन	आत्मा
स्थूल (कार्य)	सूक्ष्म (क्रिया)	कारण
जाग्रत	स्वप्न	सुषुप्ति
भूत	वर्तमान	भविष्यत
सत्	चित्	आनन्द
सर्वज्ञ	सर्वशक्तिमान	सर्वव्यापी
सृष्टि	स्थिति	संहार
अस्ति	भाति	प्रिय
सुषुप्ति	असुषुप्ति	न सुषुप्ति, न असुषुप्ति
प्रकृति	जीवात्मा	परमात्मा

अ	उ	म
जनन	जीवन	मरण

श्री पण्डितजी कृष्ण शास्त्री कृत 'श्रीरामगीता' के अंग्रेजी अनुवादमें कहा गया है कि इन मात्राओंके विभिन्न भागोंमें जो गूढ़ार्थ व गोपनीय रहस्य निहित हैं सामान्य रूपसे सभी पाठकों व सर्व साधारणको उसका दिग्दर्शन कराना असम्भव ही है। ये अत्यन्त गोपनीय हैं और मन्त्र शास्त्रोंमें वर्णित 'अन्तिम दीक्षा' के ही सारभूत विषय हैं। जिन्हें भारतके अत्यन्त प्राचीन और गोपनीय तन्त्र शास्त्र विषयक 'मन्त्र दीक्षा रहस्य' से अवगत होनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ है वे ही सुविधापूर्वक "भैरव रहस्य" वर्णित 'ह्रीं' और इसकी १६ मुख्य और कुल २५६ मात्राओंका उचित ज्ञानप्राप्त कर सकते हैं, जहां 'ह्रीं' को स्थूल प्रणव और ॐ को सूक्ष्म प्रणव बताया गया है।

उपर्युक्त प्रणवकी २५६ मात्राओं और उनकी प्रयोग-विधिका विस्तृत वर्णन आचार्य श्रीअप्पय दीक्षितके 'अनुभूति मीमांसा भाष्यमें' सुचारु रूपसे किया गया है।

श्रीमांडूक्योपनिषद्में प्रणवका वर्णन अ, उ, म और अर्द्धमात्रा-के रूपमें है। प्रकृति और पुरुषके नाते ये ही (४×२=८) आठ हो जाते हैं। किसी अन्य उपनिषद्में इनकी संख्या प्रकृति और पुरुष के रूपमें ही १६ और कहीं ३२ भी है। पर श्रीरामगीता और अनुभूति मीमांसा भाष्यके अनुसार प्रणवकी इन मात्राओंकी कुल संख्या १२८ और प्रकृति पुरुषके नाते १२८×२=२५६ है, इनमें ९६ तो ९६ तत्वोंके अनुसार लिये गये हैं जिनमें पञ्चतन्मात्रा

पञ्चज्ञानेन्द्रिय, पञ्चकर्मेन्द्रिय, पञ्चशब्द, मन, बुद्धि, पञ्चमहाभूत जाग्रतादि तीन अवस्थायें, कामक्रोधादि षड्रिपु अस्थि, चर्म, रक्त आदि सप्तधातु, सत, रज, तम तीन गुण आदि का है।

प्रणवका मुख्यार्थ अविच्छिन्न सच्चिदानन्द स्वरूप परम पुरुष ही है। इसका अवलम्बन और आश्रय ग्रहण करनेपर मनुष्य संसार-सागरके उस पार चला जाता है। उपर्युक्त २५६ मात्राओंमें १२८ सगुण ब्रह्मकी और १२८ निर्गुण ब्रह्मकी हैं। सगुण ब्रह्मकी १२८ मात्रायें स्वागत भेदका निरूपण करती हैं। स्वागत भेदके निरूपणमें एक ही वृक्षके मूल, शाखा, पत्ते और फूल आदिका दृष्टान्त दिया गया है। वृक्ष एक ही है पर वृक्षके एक होनेपर भी वृक्षके मूल शाखा पत्ते फूल आदि भिन्न-भिन्न भागोंमें 'स्वागत भेद' है। इसी प्रकार शरीरके भिन्न-भिन्न अवयवों वा अंग प्रत्यङ्गमें भी 'स्वागत भेद' का ही भेद विद्यमान है। इन १२८ मात्राओंमें पहली १६ विवेक वैराग्य, षट् संपत्ति और मुमुक्षुत्वरूप साधन चतुष्टय सम्बन्धी स्थूलशरीरकी १६ कलाओंका ही अनुसरण करती हैं। अधिकार वादके नाते ये १६ विभिन्न अवस्थाओंके सोलह आत्माधिकारियोंके लिये हैं। ये अवस्थायें स्थूल विवेक, सूक्ष्म विवेक, कारण विवेक और तुरीय विवेक आदि की हैं। इन १६ के अतिरिक्त शेष ११२ उपर्युक्त अवस्थाओंके क्रमानुसार ज्ञानकी सप्त भूमिकाओंमें बाँट दी गयी हैं। ईश प्रार्थनाके रूपमें प्रणवका यह ध्यान "क्रमयुक्ति" और निर्गुण ध्यान ही सर्वश्रेष्ठ है। भक्तोंके इष्टदेवरूप अन्य विविध नामोंका निरूपण प्रणवके अर्थ में ही किया गया है।

६—"जाग्रति" की १६ अवस्थायें

जाग्रतिकी १६ अवस्थायें हैं। ये निम्नलिखित हैं :—

जाग्रतिकी प्रथम चार अवस्थायें जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति और तुरीया हैं। एक दूसरेके मिश्रण वा गुणन भेदसे ये ही ४×४=१६ हो जाती हैं। (१) जाग्रत-जाग्रति (२) जाग्रत-स्वप्न (३) जाग्रत-सुषुप्ति (४) जाग्रत-तुरीया (५) स्वप्न-जाग्रति (६) स्वप्नगत-स्वप्न (७) स्वप्न-सुषुप्ति (८) स्वप्न तुरीय (९) सुषुप्ति-जाग्रति (१०) सुषुप्ति-स्वप्न (११) सुषुप्ति-सुषुप्ति (१२) सुषुप्ति-तुरीय (१३) तुरीय-जाग्रति (१४) तुरीय-स्वप्न (१५) तुरीय-सुषुप्ति और (१६) तुरीया-तुरीय—ये जाग्रतिकी १६ अवस्थायें हैं। तुरीया जाग्रतिकी अन्यतम अवस्था है। विश्व और विराटके भेदसे यह (१६×१६×२)=५१२ हो जाती है। जाग्रतिकी इन ५१२ अवस्थाओंका अतिक्रमण करना अत्यन्त कठिन ही नहीं दुस्साध्य भी है। यह प्रत्येकके लिये संभव नहीं है। इनका अतिक्रमण सभी नहीं कर सकते। कुछ लोग कुछका ही निराकरण कर सकते हैं। ५१२ की अन्तिम अवस्थाका अतिक्रमण ही पूर्ण "स्वातन्त्र्य" वा मुक्ति है। प्रणवका ध्यान ही सबके लिये विशेष सहायक है। पहली १६ अवस्थायें प्रणवके अन्तर्गत हैं।

जो कुछ देख पड़ता है—यत्किञ्चित् जगत्याञ्जगत—उसमें यह, वह अथवा मोर तोरका भाव नहीं रहना ही जाग्रत-जाग्रतिकी पहली अवस्था है, और जिस अवस्थामें नाम-रूपका अत्यन्ताभाव हो जाता है वह तत्त्ववेत्ताओंके कथनानुसार जाग्रत-स्वप्न है। इसकी प्राप्ति सच्चिदानन्दके स्वरूपके साक्षात्कार होनेपर ही होती है। जाग्रत-

सुपुप्तिमें आत्मज्ञानके अतिरिक्त और कोई भी भाव नहीं रह जाता। जाग्रत-तुरीयमें यह दृढ़ निश्चय हो जाता है कि तीन अवस्थामें और स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीर भी मिथ्या वा अभावरूप है। स्वप्न जाग्रतिमें यह निश्चय हो जाता है कि नक्षत्र जगत्की गति-विधिमें क्रिया होनेके कारण, नक्षत्रोंकी गतिमें जो हलचल होती है, वह स्थूल जगत्का ज्ञान नहीं रहनेपर आत्माको बांध नहीं सकती। स्वप्नगत-स्वप्नमें कारण ज्ञानका नाश हो जाता है और द्रष्टा, दृश्य और दर्शनका भाव बना रहता है। स्वप्न सुपुप्तिमें जहां अत्यन्त सूक्ष्म विचारकी अधिकतासे समस्त मनोवृत्तियां (आत्माके) ज्ञान-में विलीन हो जाती हैं, स्वप्न-तुरीयामें जीवका स्वसंवेद्य आनन्द विश्वके अखिलानन्दमें तिरोभूत होता है। सुपुप्ति जाग्रतिमें मनो-वृत्तियोंके उदय होनेपर जीवका स्वसंवेद्य आनन्द Universal Intelligence "विज्ञान" का रूप धारण करता है। सुपुप्ति-स्वप्नमें साधक अपनी एक-वाक्यता वृत्तियोंके साथ करता है। सुपुप्त-सुपुप्ति-में साधक इन मनोवृत्तियों और ईश्वरकी निर्गुण अवस्थाके परे 'बोधात्मैक्य' की स्थिति प्राप्त करता। सुपुप्ति-तुरीयामें अखण्डैक रसका अनुभव स्वतः ही होता है। तुरीय-जाग्रतिमें अखण्डैकरसका अनुभव जाग्रतावस्थामें भी होता है। तुरीय-स्वप्नकी प्राप्ति अत्यन्त कठिन है। तुरीय-स्वप्नमें अखण्डैकरसका रसास्वादन स्वप्ना-वस्थामें भी सम रूपसे हुआ करता है। तुरीय-सुपुप्तिकी प्राप्ति और भी कठिन है। इस तुरीया-सुपुप्तिमें योगीको वह अखण्डैकरस स्पष्ट रूपसे भासता है और स्वसंवेद्य अनुभवका विषय हो जाता है। सबसे ऊँची स्थिति तुरीया-तुरीय की है। तुरीया-तुरीयमें निर्मली वा

कटकफल वा कटकधूलिकी तरह वह अखण्डैकरस भी खण्ड-खण्ड होकर वा विनष्ट होकर ही रहता है।

यह 'अरूपावस्था' बुद्धिका विषय नहीं है। यह वचन अगोचर बुद्धिकी ही अरूपावस्था है। ये सोलह अवस्थायें, और इनकी प्राप्ति कठिन अवश्य हैं पर इनकी प्राप्तिके लिये उचित प्रयत्न करना ही सच्चा पुरुषार्थ है। ॐ मात्राओंकी ये १६ अवस्थायें विराटकी स्वरूप हैं। ये जाग्रतिकी उपर्युक्त सोलह अवस्थाओंके ही विविध ब्राह्मीस्थित रूप हैं। शेष ११२ ज्ञानकी सप्तभूमिका और सोलह अवस्थाओंकी विभिन्न स्थितयोंके विभाग वा रूपान्तर मात्र हैं। ये १२८ मात्रायें निर्गुण ब्रह्म की हैं, सगुणकी नहीं।

द्वितीय परिच्छेद—ॐ का ध्यान

१- साधना

मनुष्य जीवनमें ॐ ही आपका चिरसंगी और श्रेष्ठ मित्र है ! यह अमृतत्व और नित्य आनन्द प्रदान करनेवाला है। ॐ ही सद्-गुरु है। ॐ पथप्रदर्शक और आचार्य है। ॐ जप, ॐ संकीर्तन, ॐ स्मरण, ॐ चिन्तन, ॐ मनन, ॐ विचार और ॐ ध्यानके दृढ़ अभ्याससे, निरन्तर ॐ के 'सत्संग' में ही लगे रहें।

वैखरी, उपांशु अथवा मानसिक रूपसे ॐ की निरन्तर रट लगाना ही ॐ जप है। ॐ ध्वनिका उच्चस्वरसे उच्चारण करना और इसकी प्रतिध्वनिको अपने श्वासके साथ ही मूलाधार चक्रसे सहस्रार चक्र तक ले जाना ही ॐ कीर्तन है। निरन्तर ॐ की ही चिन्तामें लगे रहना ॐ चिन्तन है। मनमें ॐ का दृढ़ संकल्प ही मनन और ॐ वा ब्रह्मकी जिज्ञासा ही ॐ विचार है। ॐ सर्वव्यापी शुद्ध चैतन्य स्वरूपोऽहं, सोऽहं ब्रह्म ॐ—अर्थात्, मैं सर्वव्यापी शुद्ध चैतन्य स्वरूप ब्रह्म हूं—की अद्वैत भावनासे अविच्छिन्न तैलधारावत् उस नित्य और अव्यक्त आत्माका निदिध्यासन ही ॐ का ध्यान है। हमारी यह अद्वैत ब्रह्मभावना हृदयगुहाके गुह्यतम् प्रदेशमें अपना "राजविद्या राजगुह्यं पवित्रमिदमुत्तमम्" रूप सुसुखं, कर्त्तुमव्ययम् प्रत्यक्षागमनं स्वभाव सुलभ सहज धर्म बना ले और शरीरके प्रत्येक धूलिकणमें

रोमछिद्रमें, प्रत्येक अणु परमाणु और जीवाणुमें, प्रत्येक नाड़ी और नसनसमें, रक्तके प्रत्येक विन्दुमें इस परम पवित्र ब्रह्मभावनाका अद्वैत भाव अपना अद्वय रूप ही ग्रहण कर ले। ॐ की ध्वनि, ॐ का जप,कीर्तन वा ॐ का ध्यान करते हुए आप अपनेको स्वयं ॐ वा सर्वान्त रूप ही समझें। भूल जायें इस नाम रूपमय दृश्य जगतको और अपने आपको उसे नित्य और सर्वव्यापी सच्चिदानन्द परब्रह्म का ही शुद्ध स्वरूप समझें।

ॐ के इस निर्गुण ध्यानके कई प्रकार हैं—यथा (१) लय-चिन्तन ॐ का (२) लयचिन्तन अन्तःकरणका (३) लयचिन्तन, पंचतत्त्वोंका (४) अन्वयव्यतिरेक (५) नेति, नेति—यथा, न+इति, न+इति, मैं यह नहीं हूं, यह नहीं हूं, मैं वह हूं, मैं वह हूं, मैं शरीर नहीं हूं, मैं मन नहीं हूं—मैं सच्चिदानन्द ब्रह्म हूं, ॐ सच्चिदा-नन्दस्वरूपोऽहं सोऽहं ब्रह्म ॐ—मैं साक्षी हूं आदिकी अद्वैत विधि।

(६) अध्यारोपवाद भागत्याग लक्षण (७) अर्थ सहित ॐ का चिन्तन, जप, स्मरण, कीर्तन वा ध्यान (७) पंचकोश विलक्षण वा व्यतिरेक (८) अवस्थात्रय साक्षी रूप ध्यान (९) त्रिगुणातीत अनन्त ब्रह्म भाव (१०) सोऽहं जप और ध्यान आदि।

२—ॐ जप

ॐ (प्रणव) जपका, मनपर आश्चर्यजनक प्रभाव पड़ता है। यह परम पवित्र ॐ की ही ध्वनि है कि जिसने इन दिनों पूर्वीय गोलार्द्ध के धर्मशास्त्रोंका सूक्ष्म अध्ययन करनेवाले सभी पाश्चात्यतत्व-वेत्ताओंका ध्यान भी अपनी ओर आकर्षित कर रखा है। उन

पाश्चात्य तत्ववेत्ताओं और वैज्ञानिक सूक्ष्म तत्वदर्शियोंने अपने अनुभूत प्रयोगोंसे यह सिद्ध कर दिखाया है कि विराट ब्रह्मके कण्ठसे सर्वप्रथम उत्पन्न होनेवाले ॐ शब्दकी जो प्रतिध्वनि होती है, उसका वह दिव्यशक्ति सम्पन्न पूर्ण उच्चारण यदि निरन्तर कुछ काल तक अखण्ड रूपसे होता रहे तो बड़ीसे बड़ी "अट्टालिकायें" भी गिरकर धूलि कणोंमें मिल जायेंगी। सुदृढ़ अभ्यास द्वारा स्वसंवेद्य अनुभव हुए विना इस तथ्यपर सहसा विश्वास करना भी कठिन ही प्रतीत होता है। पर अभ्यास द्वारा इसका अनुभूत प्रयोग कर लेने पर कोई भी सहज ही जान सकता है कि यह किस प्रकार अक्षरशः सत्य और स्वतः प्रमाणित भी है। हमने इस ॐ ध्वनिकी विलक्षण शक्तिका अनुभव अभ्यास द्वारा किया है और अपने अनुभवसे यह कह सकते हैं कि उपर्युक्त कथनमें किसी प्रकारकी भी कोई अत्युक्ति वा अतिशयोक्ति नहीं है। ॐ ध्वनिका यथाकथित परिणाम अवश्य इसकी शब्द योजनाके अनुसार (अ, उ, म) के रूपमें ॐ का उच्चारण करनेपर, साधकके चित्तपर सामान्य प्रभाव ही होगा पर ॐ का उचित रूपसे, विधिवत उच्चारण करनेपर ॐ की यह विलक्षण ध्वनि साधकके स्थूल शरीरके प्रत्येक अणु परमाणुको सहसा उद्घोषित, अनुप्राणित और अनुभावित कर देती है और अपनी विलक्षण स्पन्दगतिके प्रकम्पनसे नयी नयी विचित्र परिस्थितियोंमें शरीरकी खोयी हुई "कुण्डलिनी" शक्तिको भी जगा देती है।

जिस समय ॐ का ध्यान करने वैठें, कम से कम ५ मिनट तक सुदीर्घ ॐ की प्रणव ध्वनि अवश्य कर लें। इससे मनका विक्षेप नष्ट होगा और चित्त भी शान्त और एकाग्र हो जायगा। संसारकी सभी

मलिन वासनायें हट जायेंगी और निर्मल हृदयाकाशमें आत्मानुभूतिके परमपवित्र सुन्दर भाव उदय होंगे। पंचकोशोंमें 'रसोवैसः, का ही समरस भाव उत्पन्न होगा और आप उस नित्य ब्रह्मकी नित्यताका ही उपभोग करेंगे। इस प्रकार इस एकाक्षर ब्रह्म ॐ की नित्यताका ही सरस उपभोग करते हुए आप मन ही मन ॐ का अजपाजप और ॐ का ही निर्गुण ध्यान भी करते रहें।

३—ॐ ध्वनि

कीर्तन रूपसे ॐ ध्वनि वा दीर्घ प्रणवका अभ्यास आप पूर्ण श्रद्धा और विश्वासके साथ प्रेमपूर्वक अपने निर्मल हृदयाकाशसे करें। ॐकी यह ध्वनि हृदयसे निकले, केवल मुखसे ही नहीं। ॐ ध्वनिका अभ्यास करते हुए आप इसकी सर्वज्ञता, सर्वशक्तिमत्ता, सर्वव्यापकता और सर्वरूपताका ध्यान भी अवश्य रखें और यह अनुभव भी करते रहें कि आपके प्रत्येक रोम, नाड़ी, शिरा, स्नायु, अणु परमाणु, रोमछिद्र और प्रबल पराक्रमी रक्तबीजकी तरह शरीरके प्रत्येक रक्तबिन्दु और विद्युतकणसे भी ॐकी ही विलक्षण ध्वनि अपने प्रकृत रूपमें अखण्ड तैलधारावत् अविरल गतिसे स्वतः ही हो रही है। इस प्रकार ॐ का सम्यक् ध्यान करते हुए अपने पूर्णवीर्य, पराक्रम, शक्ति, ओज और तेजसे अखिल विश्वको ॐकी ध्वनिसे पूर्णतया अच्छादित कर दें।

अब अपनेको ॐ ध्वनिसे ही परिपूर्ण करनेके लिये कटिबद्ध होकर तैयार हो जायें। वेदान्तकेशरीकी तरह ॐ का 'सिंहगर्जन' अविलम्ब इसी क्षण आरम्भ कर दें।

आप ध्यानके आरम्भमें अर्थसहित दीर्घ प्रणवकी ॐ ध्वनि स्वरपूर्वक ५ मिनट तक अवश्य करें। इसका भावार्थ अच्छी तरह समझ लें। ध्वनि नाभिसे सहस्रार पर्यन्त लगातार एक स्वरमें ही होनी चाहिये। नाभिसे सहस्रार तक ध्वनिका तार बंध जाना चाहिये। दीर्घ प्रणवकी ध्वनिसे जो स्पन्दगति उत्पन्न होती है वह मनके संकल्प-विकल्प, मल, विक्षेप और सभी मलिन वासनाओंको दूर भगाती है, चित्तको एकाग्र करती है और अन्नमय, प्राणमय और मनोमय कोशोंको समताकी तराजू पर तौलती हुई मनको आत्मामें मिला देती है।

ॐ की ध्वनिसे हृदयके सभी कुविचारोंको दूर कर दें। ॐ का गान स्वरपूर्वक करते हुए शक्ति, बल और क्षमता प्राप्त करें। ॐ जपसे मनको अपने वशमें कर लो। ॐ के ध्यानसे ब्रह्मको अपने वशमें कर लो, अपने सच्चिदानन्द स्वरूपमें स्थित हो जायें। यह एकाक्षर ब्रह्म ॐ आपकी रक्षा करे, आपको उन्नतिके पथपर अग्रसर करे, श्रेय और लक्ष्य प्राप्तिका हेतु हो और जन्म और मृत्युके आवागमन रूप संसार चक्रसे अनायास ही छुड़ा दे।

जिस समय चित्त उदास हो वा सिरमें दर्द हो तो कुछ देरतक द्रुतवेगसे टहलें और ॐ की ध्वनि टहलते हुए ही करें। ॐ ध्वनि-का अभ्यास करते हुए यह अनुभव भी अवश्य करें कि आपके समस्त शरीरमें किसी दिव्य शक्तिका संचार हो रहा है। ॐ ध्वनि संसारके सभी रोगोंकी अचूक औषधि है। और आरोग्य प्रदान करनेके लिये गंगाजल और हिमालयकी ही जड़ी बूटियोंसे संशोधित 'अमृत-मूरि' रसायन है। जब आप स्वयं इस 'वाजीकरण'

नुसखेका प्रयोग करेंगे तब देखेंगे कि दिव्य-जीवन प्रदान करनेवाली इस दिव्य औषधिमें कितना आश्चर्यजनक दिव्य बल है। जिस प्रकार किसी भी रोगको दूर करनेके लिये आपको औषधिकी दो तीन मात्रायें नित्य नियमित रूपसे लेनी पड़ती हैं उसी प्रकार इस 'भव' रूप अध्यात्मिक रोगकी पूर्ण निवृत्तिके लिये भी ॐ ध्वनिका कम से कम दो तीन चार नित्य नियमित रूपसे अवश्य अभ्यास करना चाहिये। ब्रह्म या आत्मा ॐ ही है। ॐ ध्वनिका आश्रय ग्रहण करना ॐ कार रूप शिव (ॐ कार रूपः शिवः) और उसकी आद्यशक्ति 'प्रणवात् प्रकृतिरिति' त्रिगुणात्मिक प्रकृति रूप अक्षय तृतीयाके अक्षय भंडारका भंडारी 'शिवका कुबेर, ही बन जाना है। ॐ ध्वनिका अभ्यास करते हुए 'प्रकृतिस्थोऽस्मि, मुदितोऽस्मि; और स्वास्थ्योस्मि' का ही निरन्तर ध्यान करें। ॐ की ध्वनिसे रोगके कीटाणु स्वयं ही नष्ट हो जाते हैं। शरीरकी रक्षा, आरोग्य लाभ वा स्वास्थ्य सुधारके लिये आप ॐ ध्वनिका अभ्यास घरमें ही एक आसन पर बैठ कर कर सकते हैं।

४—प्रणव ॐ और प्राणायाम

आप ॐ का अभ्यास श्वासके साथ ही प्राणायाम कालमें भी सुविधापूर्वक कर सकते हैं। पूरकमें 'ओ' का और रेचकमें 'म्' का जप मनमें ही करें। यह प्राणायामके अभ्यासमें दृढ़ता प्रदान करेगा और विशेष रूपसे सहायक होगा। इसे ही सगर्भ प्राणायाम भी कहते हैं। ॐ का निरन्तर 'अजपाजप' भी कर सकते हैं। श्वासको ध्यानपूर्वक परखते रहें। अपने प्रत्येक श्वासमें 'ओ' और

प्रश्वासमें (श्वास छोड़ते हुए) 'म्' का ही उच्चारण मन ही मन होने दें। इस 'श्वास श्वास पर ॐ जप' का अभ्यास आप चलते फिरते, घूमते और टहलते हुए भी सुविधापूर्वक कर सकते हैं। ॐ जपके साथ सुदृढ़ अभ्यास ॐ ध्यानका ही करें। निरन्तर यह अनुभव करते रहें कि ॐ की यह ध्वनि आपके हृदयसे ही निकल रही है। आपकी यह वंशीध्वनि आपको उस मेघश्यामके नील गगन मंडलमें ले जायेगी और आप स्वयं भी इस वंशीध्वनिके साथ ही उस घनश्याममें लीन हो जायेंगे। यही तो भक्तोंकी 'रामधुनि लागी, गोपाल धुनि लागी, कैसे छुटे यह राम धुनि लागी' की सुमधुर संकीर्तन ध्वनि है।

ॐके ध्यानमें ध्यान यह रखें कि प्रणव रूपसे यह परम ज्योति रूप एकाक्षर ब्रह्म ॐ ही अ,उ,म इन तीन अक्षरोंका और भगवानके गर्भ धारण करनेका 'ममयोनिर्महद्ब्रह्म' रूप उत्पत्ति स्थान है। प्राणायामके समय नासिकाके वाम छिद्र वा इड़ा नाड़ीसे १६ मात्राओं से पूरक करते हुए ध्यान ॐ के अ (सरस्वती सहित ब्रह्मा) का और ६४ मात्राओंसे कुम्भक करते हुए ध्यान उ (लक्ष्मी सहित विष्णु) का और ३२ मात्राओंसे रेचक करते हुए ध्यानम् (पार्वती सहित शिव) का करें। इस प्रकार ॐ का ध्यान प्राणायामके साथ ही १ : ४ : २ के राशिक्रमसे कर सकते हैं। नित्य नियमित रूपसे इसका अभ्यास २-३ बारसे आरम्भ कर क्रमशः २०-३० बार तक यथासाध्य सुविधापूर्वक ही करें। आरम्भ कालमें १ : ४ : २ की राशिसे आरम्भ कर क्रमशः १६ : ६४ : ३२ की राशि तक सहज ही जा सकते हैं। प्राणायाम सहित ॐ ध्यानके इस ब्रह्माभ्याससे

साधकको चित्तकी शान्ति और आत्मबलकी प्राप्तिका वरदान स्वतः ही प्राप्त होता है। कुंडलिनी अनायास ही जाग्रत होती है और साधककी 'निर्विकल्प समाधि' भी स्वयं ही सिद्ध हो जाती है।

५—युक्ति

वेदान्तमें दृष्टान्त और युक्तियोंकी कमी नहीं है। साधकको चाहिये कि जो दृष्टान्त और युक्ति उसे रुचिकर प्रतीत हो, अपनी रुचि वा सुविधाके अनुकूल वह उसका ही अवलम्बन करे यह दृष्टान्त वा युक्तियों ही मनको आत्माकी ओर प्रवृत्त करनेमें विशेष सहायता पहुंचाती हैं। ध्यानके समय प्रायः कई प्रकारकी संशय भावनायें और विपरीत भावनायें (यथा मैं शरीर हूँ , यह जगत ही सत्य है, आदि, आदि) साधकके मनमें संशय उत्पन्न कर "विक्षेप" का मुख्य हेतु बनती हैं। ऐसे कुअवसरोंपर साधकको इन विपरीत भावनाओंको हटाने और स्वस्वरूपमें 'स्थिति' प्राप्त करनेके लिये इन दृष्टान्तों और युक्तियोंका ही आश्रय ग्रहण करना चाहिये। मैं करनेवाला हूं (कर्ताऽहं) की कर्त्तृत्व भ्रान्तिको हटानेके लिये स्फटिक और नीलवस्त्र वा लाल फूलका, भेदभ्रान्तिके भेदभावको भगानेके लिये सूर्यके 'प्रतिबिम्ब' का संगदोष वा भ्रान्तिको समूल नष्ट करनेके लिये घटाकाशका, विकारभ्रान्तिका विकार दूर करनेके लिये रज्जुसर्पका और जगत ही सत्य है की जगत-सत्य 'भ्रान्तिको' छू-मन्तर करनेके लिये कनक कुण्डलका दृष्टान्त साधकोंके लिये अत्यन्त उपयोगी है। समुद्रके फेन, बुलबुले, झाग, तरंग और जलाकाशका और आकाशकी नीलिमा, रेत (बालुकण) और मृग-

तृष्णा, चुम्बक और लोहा, अग्नि और लोहा, सूर्य और सूर्यकी किरणें, मिट्टी और मिट्टीके पात्र, धागा और वस्त्र। चांदी और सीपी, आदि दृष्टान्तोंसे साधकोंकी संशय निवृत्ति सहज ही हो जायेगी। साधक इन दृष्टान्तोंको सदा ध्यानमें ही रखें। यथा समय इन दृष्टान्तों वा युक्तियोंको स्मरण करनेसे ही अनेक सन्देह दूर हो जाते हैं और आत्मा वा ब्रह्मका अद्वैतवाद ही दृढ़ हो जाता है।

६—ॐ का त्राटक ध्यान

ज्ञानयोगके नये साधकोंको भी, साधनाके आरम्भ कालमें, कम से कम तीन महीने ॐ का ध्यान, ॐ के चित्रपर आंखें खोलकर त्राटककी विधिसे ही करना अत्यन्त उपयोगी होगा। कुछ काल तक खुले नेत्रोंसे 'त्राटक' का अभ्यास कर लेनेपर ॐ के इस चित्रका ही ध्यान बन्द नेत्रोंसे ॐका यह मानसिक ध्यान ही ॐका सगुण ध्यान होगा। साधक ध्यानके साथ ॐ का अर्थ सहित मानसिक जप भी भावपूर्वक अवश्य करें। आंखोंसे ॐ के दर्शन और कानोंसे ॐ (ध्वनि) का श्रवण करें। चेष्टा यह होनी चाहिये कि कानोंमें ॐ ध्वनिके अतिरिक्त बाहरकी अन्य कोई भी ध्वनि सुनायी नहीं पड़े। साधक अपने उपासना मन्दिर वा पूजागृहमें ॐ का एक सुन्दर और मनोहर चित्र, अपने सामने ही रखें। ध्यान इस चित्रका ही करें। इसी चित्रपर खुले नेत्रोंसे त्राटक भी करें। ॐ का ध्यान करते हुए ॐ ब्रह्मकी नित्यता, अपरिमेयता, परिपूर्णता और सर्व-व्यापकता आदि गुणोंका निरन्तर मनन भी अवश्य करते रहें। यह ॐका उभयात्मक सगुण और निर्गुण ध्यान भी है। अपने मनमन्दिर वा

चित्त रूप दर्पणमें ॐ का यह मानसिक चित्र सदा ही बनाये रखें और इसकी मानसिक पूजा भी करते रहें। पूजाके लिये षोड़शोपचार वा पंचोपचार विधिसे यथासाध्य पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य और आरतीके लिये कपूर आदिकी उचित व्यवस्था भी अवश्य करनी चाहिये। ॐ का (सगुण) ध्यान और ॐ की यह पंचोपचार वा षोड़शो-पचार पूजा 'भक्ति और ज्ञान' का समुच्चयात्मक वा सम्मिलित युगल रूप है।

७—'ॐ' ध्यान—"तज्जपस्तदर्थभावनम्"

एकाक्षर ब्रह्म ॐ के लिये ॐ का अर्थ सहित ध्यान आत्म-साक्षात्कारका मुख्य हेतु है। यही वेदान्तकी साधना है और यही ज्ञानयोग है। एकमात्र आत्मा वा ब्रह्मके अद्वैततत्व वा अद्वय भावका तैलधारावत् अविच्छिन्न चिन्तन ही ध्यान है। ॐ की ध्वनि वा ॐ का सुमधुर गायन करते हुए आप मनको आत्मामें लीन करते हुए अपनेको ज्योतिर्ज्योतिः "स्वयं ज्योति" परमहंस, परमात्मा, चिन्मय सच्चिदानन्द स्वरूप ब्रह्म ही समझें। आप अपनेको दीन वा तुच्छ क्यों समझते हैं। आत्मा रूपसे आप राजराजेश्वर, महाराजाधिराज, एकछत्र चक्रवर्ती सम्राट हैं। आत्माकी आत्मा 'आत्मैवेदं सर्वम्' रूप सर्वात्मा संकल्प, विकल्पात्मक मनके मन, प्राणोंके प्राण, श्रोत्रोंके श्रोत्र, नेत्रोंके नेत्र, अखिल विश्वके ही अधिपति, प्रकृतिके ईश्वर (प्रकृतिरीश्वर) सर्वेश्वर, और उपनिषदोंके ब्रह्म हैं, जिसका—'यस्यनाममहद्यशः' यशगान और नामोंकी स्तुति-एकंसद्विप्राः बहुधा वदन्ति—तत्ववेत्ता और वेदविद् वेदोंके अंग पद और क्रमसे विधि

पूर्वक किया करते हैं और जिसकी महिमा सन्त महात्मा और मंत्र-द्रष्टा ऋषि महर्षियोंने विविध रूपोंसे विविध स्वरोंमें ब्रह्मसूत्रों के स्वयंसिद्ध और विवेकपूर्ण अकाट्य प्रमाणोंसे गायी है। आपका भी मुख्य कर्तव्य यही है कि देह वा संसारका अस्तित्व ही नहीं मानें, यह शरीर नहीं है। यह संसार नहीं है। अहंब्रह्माऽस्मि—मैं ब्रह्म हूं, की ही घोषणा करें। हृदय पटलपर 'नाहंदेहोऽइमान्येति', मैं देह नहीं हूं; मैं आत्मा हूं; मैं चैतन्य हूं, आत्मोऽहं, चैतन्योऽहं, अहमात्मा आदि अद्वैतभावोंको ही सुदृढ़ रूपसे अंकित करें। भेड़ों-की तरह मे, मे (मेरा मेरा) वा मैं, मैं करना छोड़ दें। क्षणमात्रके लिये भी मैं यह शरीर हूं, वा मैं अमुक, प्रसाद, सिंह, लाल, शर्मा, वा गुप्त आदि हूं का ध्यान न करें। मोहमायाके महाजालमें ही लिपटे न रहें। ठगनी मायाकी मोहमूर्च्छा ही में सोये हुए न रहें। आप स्वयं आत्मस्वरूप सच्चिदानन्द आत्मा हैं। इस देह वा जगतका भान होते ही विवर्तवाद और दृष्टि सृष्टिवादके अद्वैत ब्रह्मवादका सहारा लें। देह वा संसारकी यह विपरीत भावना कपूरकी तरह उड़ जायेगी और आप शीघ्र ही ध्यानावस्थित हो जायेंगे। वेदान्त-का रज्जुसर्प न्याय विवर्तवादका दृष्टान्त है। संसार तभी देख पड़ता है, जब हम देखते हैं। यह दृश्यमात्र है। असत् है। सत् नहीं, यह तो मन्त्रकी स्फुरणा वा कल्पनामात्र है। यह सृष्टि नहीं है, यह सृष्टि दृष्टिकी वा दृष्टि मात्र ही है। यही वेदान्तका दृष्टि सृष्टिवाद है।

सवार हो जायें ॐ के जलयान (जहाज) पर और निश्शङ्क होकर अहं सर्वम्, अहं ब्रह्माऽस्मि—मैं सर्व हूं, और मैं ब्रह्म हूं

(आदि ब्रह्मभावना) की पाल भी खोल दें। ब्रह्मके ध्यानमें स्थित होकर इस संसार समुद्रको तर जायें, अपनी ब्राह्मी स्थिति वा "स्वरूप स्थिति" के बल पर ही सदसद्विवेकरूप विचारका लंगर डाल दें, वासनाकी प्रबल आंधी वा प्रारब्धजनित अशुभ वा मलिन संस्कारोंके भयंकर तूफानमें 'आत्मानुभूति' कटिबंधका लगा लें और यदि संयोगवश मोहके चट्टान वा क्षणभर भी स्थिर नहीं रहनेवाले हिमखंडोंपर टकराकर जहाजके चूर चूर हो जानेकी घोर आशङ्का हो तो भी जहाँ-जहाँ मन जाये वहां-वहां ब्रह्म दर्शन रूप आत्मरति वा ब्रह्मसाक्षात्कारकी 'ब्रह्म डोरी' डालकर सच्चिदानन्द ब्रह्मकी आश्चर्य्यमयी ब्रह्मनगरीमेंआप भी 'ब्रह्मविद्ब्रह्मैव भवति' ब्रह्म ही हो जायें। इस प्रकार जब 'अहं ब्रह्माऽस्मि' की ब्रह्म भावनासे "सोऽहमिति यावदास्थितिः सानिष्ठा भवति" की निष्ठा ही प्राप्त हो जाती है। तब शब्दानुविद्ध सविकल्प समाधिकी और जब 'अहं ब्रह्माऽस्मि' की यह भावना भी नष्ट होकर योगियोंकी ब्रह्मभावनामें ही लीन हो जाती है तब निर्विकल्प अवस्थाकी प्राप्ति होती है।

"परा वैराग्य ही निर्विकल्प समाधिकी अन्तरङ्ग साधना है।" समस्त संसार ही मृगतृष्णावत् अत्यन्त मिथ्या प्रतीत होने लगता है। इस परा वैराग्यके उदय होनेपर हृदयाकाशकी सूक्ष्मातिसूक्ष्म अत्यन्त धीमी वासनायें भी शून्य आकाशमें विलीन हो जाती हैं। और निर्विकल्प समाधिमें ध्यानका भी ध्यान नहीं रहता। ध्याता और ध्येय दोनों घुलमिलकर एक हो जाते हैं। द्रष्टा और दृश्यकी एक ही अनन्य गति हो जाती है। ज्ञाता, ज्ञान और ज्ञेयकी त्रिपुटी-का आत्यन्तिक लय हो जाता है। यह वेदान्तका 'त्रिपुटी लय' है।

ओ३म्

ॐ का ध्यान करनेवाला आध्यत्मिकताका विद्युतयंत्र वा 'विजली घर' ही हो जाता है। उसके पास जो आ जाते हैं अथवा जो उसकी सन्निधि वा संसर्गमें आ जाते हैं वह उनपर शक्ति आनन्द और शान्तिकी वर्षा करता है। वह अखिल विश्वको अपने 'अध्यात्मवल' से ढँक लेता है वह "देवस्थान" रूपसे दिव्य जीवन के दिव्य वलका दिव्य स्रोत वन जाता है। वह जानता है कि जीव-ब्रह्म, पिण्ड-ब्रह्माण्ड, मनुष्य और ईश्वर, मनुष्य और जगत्, मनुष्य और ब्रह्मका परस्पर क्या सम्बन्ध है।

निदान वह आत्माको सभी जीवोंमें और सभी जीवोंको आत्मामें देखता है। ' सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि।" करतलगत आंवलेकी तरह वह अखिल ब्रह्माण्डके गूढ़ भेद और रहस्योंसे अवगत होता है। वह नित्य सुख,शान्ति और आत्मज्ञानके प्रवल शत्रु मन और इन्द्रियोंको जीत कर आत्मज्ञानरूप कल्पतरुका उपहार प्राप्त करता और आध्यात्मिक रणक्षेत्रका शूरवीर, विजयी, महारथी वन जाता है।

मनुष्यजीवनके आत्मारूप लक्ष्यकी प्राप्ति इस एकाक्षर ॐ के ध्यानसे सहज ही हो जाती है। ॐ का ध्यान ही वास्तविक ध्यान और मोक्षप्राप्तिका राजमार्ग है। ॐ के ध्यानसे संसारके सभी ताप, दुःख और शोक दूर हो जाते हैं। ॐ का ध्यान दुःखकी जड़को ही समूल नष्ट कर देता है। ॐ का ध्यान 'आत्मैक्य' का दिव्य ज्ञान प्रदान करता है। ॐ का ध्यान 'एकात्म' भावको पुष्ट करता है। ॐ का ध्यान वह हवाई जहाज, वायुयान वा दिव्यपुष्पक विमान है कि जो एकमात्र ॐ का ही आश्रय ग्रहण करनेवालोंको दिव्य सुख,

दिव्य शान्ति और दिव्यानन्दके दिव्य गगनमण्डलमें एवं अत्यन्त देदीप्यमान दिव्यात्मा और दिव्य पुरुष श्री [illegible] नागर नवल-किशोर श्री मेघश्यामके नित्यनवल विहारका नित्य सुख ही प्रदान करता है। प्रणव ॐ की उपासना ही भिन्न-भिन्न प्रकारकी विविध समाधियोंमें अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुई। 'ॐ सोऽहं हंसः' रूप ब्रह्म-का है (अहमंत्यक्त्वा अहमस्यहम्)—अहंभाव शून्य 'अहं' आत्मा-का और "स" अहं आत्मा और ब्रह्मके ब्रह्मात्मैक्यका ही प्रतीक होनेके कारण समाधि योगकी यह "हंसः" रूप ब्रह्मकी उपासना ही योगियोंको ब्रह्मसंस्थकी ब्राह्मी स्थितिमेंही स्थित करती है। जिसने यह स्वरूप स्थिति प्राप्त कर ली वही "परमहंस" है। यही कारण है कि शास्त्रोंमें संन्यासियोंके लिये "प्रणव ॐ" और की अहंग्रह उपासनाका ही विधान है। जो अहंग्रह उपासनाके उच्च शिखर पर पहुंच गये हैं, उन संन्यासियोंको ॐका ध्यान ही ब्राह्मीस्थितिके उच्च-तम शिखरपर ले जाता है और "परमहंस" बनाकर ही छोड़ता है। हे निर्दोष विवेक ! विशुद्ध स्वयं प्रकाश ! और मृत्यु विरहित अमृत अमर ! आप स्वयं ही ॐ हैं। आप दिव्योंकी भी दिव्यात्मा "देवा-धिदेव" महादेव हैं। माया आपकी ही मोहिनी शक्ति है। आप मायाके मायापति हैं। प्रकृति ही माया और आप मायापति महेश्वर हैं। आपके ॐ वा ब्रह्ममें स्थित होते ही प्रकृति आपके पद्माम्बुजोंमें पुष्पाञ्जलि प्रदान करेगी। यह विशालकाय, विराट, हिमालय पर्वत, सूर्य, चन्द्र, और नक्षत्र, सुविस्तृत गगनमण्डल, अगाध और अथाह जल राशिवाला यह सुवृहत् समुद्र सभी एक स्वरसे निरन्तर आपके ही सौरभमयी अति कमनीय कीर्ति, और गौरवमयी अपार महिमा-

का यश गान कर रहे हैं। श्री कैलाश मानसरोवरसे लेकर जितने भी बड़े छोटे नद, नदी, सरोवर, तालाव, ताल, तलैया, पुष्करिणी, पर्वत, द्वीप, महाद्वीप, विविध रंगके फूल और अमृतोपम सुस्वादु और सुमधुर फल वा मनोहर दृश्य हैं वह सभी आपके ही "सत्यं, शिवं, सुन्दरम्" रूप अनन्त सौन्दर्य और माधुर्यका ही गुण वर्णन कररहे हैं। वस, एक ॐ को ही अपना 'जीवनाधार' वना लें। ॐ में ही विहरें। ॐ में ही खायें, पीयें, घूमें, फिरें। और स्वयं ॐ रूप हो जायें। ॐ ही आपका वह अमृतोपम सरस, सुन्दर, सुमधुर और "स्वयं ज्योतिः" रूप स्वयं प्रकाश परम धाम है।

---

८ ॐ का सगुण और निर्गुण ध्यान

ॐ का चित्र अपने सामने रख लें और ॐ का ध्यान इस चित्र पर ही आरम्भ करें। खुले नेत्रोंसे त्राटकका अभ्यास करें। यह ॐ का सगुण और निर्गुण (उभयात्मक या समुच्चयात्मक) ध्यान है।

कुछ कालतक भगवान राम, कृष्ण वा शिवकी मूर्ति वा विग्रह आदिका सगुण वा स्थूल ध्यान भी कर सकते हैं। ॐ, सोऽहं, शिवोऽहं अथवा अहं ब्रह्माऽस्मि, तत्वमसि आदि महावाक्योंका ध्यान ही निर्गुण और निराकार (ब्रह्म) का सूक्ष्म ध्यान है। वेदान्तमें इस निर्गुण ध्यानको ही "निदिध्यासन" नामसे पुकारा गया है। ब्रह्मभावनासे ॐ का यह निर्गुण ध्यान ही वेदान्तकी अहंग्रह उपासना है। जिनकी सूक्ष्म धारण, कुशाग्र बुद्धि, दृढ़ विवेक शक्ति, उत्कट इच्छा, अदम्य साहस, तीव्र उत्कंठा और स्वावलम्बनका पूर्ण

वल हो वे ही इस अहंग्रह उपासना वा त्रिगुण ध्यानके अधिकारी भी हैं। जिन्हें चित्तशुद्धि, एकाग्रता साधन चतुष्टय, युक्ति और सामर्थ्य-की क्षमता वा सामर्थ्य प्राप्त है वे ही निर्गुण ध्यानके अधिकारी हैं। सोऽहंका ध्यान निगुण ध्याल है। निर्गुण ध्यान वेदान्तकी अहंग्रह उपासना ही है। यह अभ्यास ज्ञानयोगका है। आत्म विचार, ब्रह्म-चिन्तन, ब्रह्माभ्यास, ज्ञानाभ्यास, अभेद-चिन्तन, प्रणवोपासना, तत्वाभ्यास आदि निर्गुण ध्यानके ही पर्यायवाची शब्द हैं। जो कुछ कालतक सगुण ध्यानका अभ्यास, श्री राम कृष्णादिके स्थूल विग्रहपर सफलता पूर्वक कर चुके हैं वे निर्गुण ध्यानकी यह साधना सुगमता पूर्वक अनायास ही कर सकते हैं। पर जो हठात् निर्गुण ध्यानका ही अवलम्बन करना चाहते हैं, उन्हें कठिनाइयां भी झेलनी पड़ेंगी।

निर्गुण ध्यानमें भी, पहले कोई न कोई सूक्ष्म वा अव्यक्त मूर्ति अधिष्ठानके रूपमें रहती ही है। यथा हिम, अथवा हिम की शीत-लता-गुणका ध्यान स्थूल वा सगुण और वाष्पका ध्यान सूक्ष्म वा निर्गुण ध्यान है। अपने पिताके स्थूलरूप वा आकृतिका ध्यान स्थूल वा सगुण और पिताके गुणोंका ध्यान सूक्ष्म वा निर्गुण ध्यान है। हरी पत्तीका ध्यान स्थूल वा सगुण और इसकी हरियाली का ध्यान सूक्ष्म वा निर्गुण है। आकाशकी शून्यता और आकाशकी नीलिमाका वा सूर्यके आकाशवत् सर्वव्यापी और सर्व प्रकाशक प्रकाशका ध्यान करें। कल्पना करें कि यह सुविस्तृत गगनमण्डल उस स्वयं प्रकाश ज्योति ब्रह्मकी स्वयं ज्योतिसे ही प्रकाशित है। मन ही मन वायुके निराकार रूप वा सर्वव्यापी और सर्वत्र विराज-

मान आकाशकी कल्नना करें। आपकी यह कल्पना भी निर्गुण ध्यानका ही निर्गुण रूप धारण करेगी। आपकी अभ्यास कालकी यह आरंभिक धारणा ही आपके मनको क्रमशः तन्तु वा कमलनाल-की तरह क्षीण करती हुई वेदान्तिक निदिध्यासनका उपयुक्त पात्र वना देगी। ॐ के इस निर्गुण ध्यानमें ध्यान यह करें कि यह ॐ ही शान्ति और शान्तिका "शान्तोऽयमात्मा" रूप शान्ति भी यही है। यह ॐ का सूक्ष्म ध्यान है। मैं केवल शान्ति रूप हूं। "केवलं शास्त्र रूपोऽहं" अथवा 'केवलं शान्तिरूपोऽस्मि' का यह निर्गुण ध्यान वेदान्तकी अहंग्रह उपासना कही जायगी। ॐ नित्य सुख वा आनन्दरूप है। यह ॐका निर्गुण ध्यान है। ॐके ध्यानमें-"मैं आनन्दरूप हूं", "अहमानन्दरूपोऽस्मि वा सत्परानन्दरूपोऽस्मि चित्परानन्दमस्म्यहम्। आत्मानन्दस्वरूपोऽहं सत्यानन्दोऽस्म्यहं-सदा"। नित्य शुद्ध चिदानन्द सत्तामात्रोऽहमव्ययः। नित्य बुद्धविशु-द्धैक सच्चिदानन्दमस्म्यहम्', आदिकी ब्रह्म भावना ही वेदान्तकी अहंग्रह उपासना हो जायगी। आशा है, अब आप सगुण, निर्गुण ध्यान और अहंग्रह उपासनाके भेदको भी भली भांति समझ गये होंगे। सगुण ध्यानका दृढ़ अभ्यास निर्गुण ध्यानका अभ्यास अहंग्रह उपासनाका उत्तरोत्तर अधिकार प्रदान करता है और क्रमशः एक दूसरेकी उत्तरोत्तर 'भूमिका' भी है। निर्गुणका अर्थ गुणोंका नहीं होना वा विना गुणोंका ही है। पर इसका अभिप्राय यह नहीं है कि ब्रह्म बिल्कुल कोरा वा शून्य ही है। इसका तात्पर्य केवल इतना ही है कि ब्रह्म किसी एक ही विशेप गुण वा गुणोंका अधिष्ठान नहीं है वलिक जितने भी गुण हैं बीजरूपसे सबका ही आधार है।

न इति, न इति, केवल यही नहीं, यही नहीं—बल्कि इसके अतिरिक्त वह भी और यह भी—का ही नेति-नेति रूप 'सर्वरूप' और सर्व गुण रूप, सर्वगुण खानि और अनन्त कल्याण गुणका आगार भी है। इसके जितने भी गुण हैं वह नित्य, शाश्वत और अविनाशी हैं। नील वा लाल वस्त्रके नील वा लाल वर्ण वा रंगकी तरह परि-वर्तनशील वा नश्वर नहीं हैं। इस प्रकार ब्रह्ममें गुण वा गुणीका भाव भी नहीं हैं। ब्रह्म स्वयं ही अनन्त दिव्य गुण रूप है। यह निर्गुणकी संक्षिप्त व्याख्या है। ब्रह्म आनन्द रूप है। आनन्द ही ब्रह्म है। ब्रह्म ज्ञान रूप है। ज्ञान ही ब्रह्म है। "प्रज्ञानं आनन्दं ब्रह्म" है। ब्रह्म ही "सत्यं, शिवं, सुन्दरं" अनन्त सौन्दर्य और अनन्त ज्योति भी है। ब्रह्म ही ॐरूपोऽहं निजबोध रूप स्व-स्वरूप भी है। जो भी कुछ है सब ब्रह्म ही है। "चिदानन्दरूप शिवोऽहं-शिवोऽहं" का शिव रूप—

सत्यं, शिवं, शुभं, सुन्दरं, कान्तं, और "सच्चिदानन्द संपूर्ण सुखं शान्तं" सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म ॐ ही है।

साधना वा अभ्यासकालके आरम्भमें ॐका ध्यान, ॐका मान-सिक जप वा अजपा जाप करते हुए आप भी ॐ की प्रणव ध्वनिके साथ बिल्कुल एक ही हो जायें और साधनामें ज्योंके त्यों अग्र-सर होते जायें, ॐ के ध्यानके साथ ही निरन्तर "ॐ सच्चिदानन्द आत्माऽहं ह्याकाश सदृशोऽस्म्यहम्" की ब्रह्मभावनाका ही सुदृढ़ अभ्यास करें। अब ध्वनिके साथ ही घुलमिल कर एक हो जानेकी सुधि भी नहीं रहेगी। तज्जपस्तदर्थ भावनम्के रूपमें एकमात्र "अहं ब्रह्माऽस्मि" की ही भावना शेष रहनी चाहिये।

पाठको ! आपके हृदयमें उस दिव्य ज्योतिका ही दिव्य विकास हो। आपका यह साधनपथ दिव्यालोकसे विभूषित हो। वह दिव्य जीवनका मुख्य हेतु हो। आपको दिव्यबल प्रदान करे और आपके शरीर, मन, हृदय और शरीरके प्रत्येक अणु, परमाणु और रोमछिद्रोंमें भी दिव्य ज्योति और दिव्य शक्तिकी ही दिव्य धारा प्रवाहित हो।

९— ॐ का लयचिन्तन

ॐका यह लयचिन्तन "अद्वैतनिष्ठा" अथवा निर्विकल्प समाधिका मुख्य हेतु है। ॐ का लयचिन्तन निम्नलिखित रूपसे है:—

(क) विश्वका लय विराटमें और विराटका ॐके "अ" अक्षरमें।

(ख) तेजसका हिरण्यगर्भमें और हिरण्य गर्भका ॐ के 'उ' अक्षरमें।

(ग) प्रज्ञाका ईश्वरमें और ईश्वरका ॐ के 'म' अक्षरमें।

(घ) तुरीय जीव और ईश्वर दोनोंका ही समवर्ती उभयात्मक रूप है। अमात्राका लय ब्रह्ममें ही "कूटस्थ ब्रह्मात्मैक्यम्" वा "ब्रह्मैक्यं" का रूप ग्रहण कर लेता है। यही ॐका लयचिन्तन है और ॐ ध्यानमें अत्यन्त उपयोगी और सहायक भी है।

तृतीय परिच्छेद

ॐ ध्यानके लिये उपयुक्त मंत्र

निरन्तर ध्यान ॐ का ही करें। अपने उपासना मन्दिरमें पद्मासन, सिद्धासन वा सुखासन पर बैठ जायें। नेत्रोंको बन्द कर दें। अपने शरीरकी स्नायु और नाड़ियोंको स्वतन्त्र रूपसे, ज्यों की त्यों, अपने प्रकृत रूपमें ही रहने दें। दृष्टिको दोनों भौहोंके बीच त्रिकुटी (भृकुटी) पर स्थिर करें। संकल्प, विकल्पात्मक मनको वा चेतनाको शान्त करें। ब्रह्म-भावना वा शुद्ध भावसे ॐ का जप मनही मन करें। यह शुद्ध 'ब्रह्म-भावना' ही ध्यानकी जीवन-मूरि है। यही मुक्तिका मूल मंत्र है। ॐ का जप इस शुद्ध भावनासे ही करें कि आप ही भूमा हैं, आप ही सर्वव्यापी विशुद्ध चिद्धानन्द हैं। निम्नलिखित मंत्रोंका ध्यान भाव पूर्वक मन ही मन करें।

आप ब्रह्मसे पृथक जीव हैं, ऐसी विपरीत वा द्वैतभावनाको अपने हृदय मन्दिरमें घुसने भी न दें। द्वैतभावका पूर्ण वहिष्कार कर दें। इन मंत्रोंका अभ्यास नित्य नियमित रूपसे दृढ़तापूर्वक सच्ची लगन, श्रद्धा, उत्कण्ठा, उत्साह और पूर्ण अध्यवसायके साथ करें। सत्संग और सात्विक आहारको ही अपना संवल वना लें। तीन घण्टे प्रातःकाल ब्राह्ममुहूर्तमें और ३ घण्टे रात्रिके सन्ध्या कालमें, एक मात्र इन मंत्रोंका ही ध्यान करें। अपनी इस 'ब्रह्मभावना' को

निरन्तर, काम करते हुए भी अक्षुण्ण ही बनाये रखें। ३-४ वर्षमें ही आपको सफलता वा सिद्धि अवश्य प्राप्त होगी।

(क)

१ ॐ स्वयमेव स्वयं ज्योतिः स्वयमेव स्वयं महः। ॐ, ॐ, ॐ।

२ ॐ ज्योतिर्ज्योतिः स्वरूपोऽस्मि ह्यहमात्मा सदाशिवः। ॐ, ॐ, ॐ।

३ ॐ सर्व प्रकाश रूपोऽहं परावर सुखोऽस्म्यहम्। ॐ, ॐ, ॐ।

४ ॐ आत्माराम स्वरूपोऽस्मि सत्यानन्दोस्म्यहं सदा। ॐ,ॐ,ॐ।

५ ॐ भूमानन्द स्वरूपोऽस्मि चिदाकाशमयोऽस्म्यहम्। ॐ, ॐ, ॐ।

६ ॐ चिदानन्द स्वरूपोऽस्मि चिदानन्द मयोऽस्म्यहम्। ॐ, ॐ, ॐ।

७ ॐ आनन्द घन एवाहमंह ब्रह्माऽस्मि केवलं। ॐ, ॐ, ॐ।

८ ॐ सर्वत्र परिपूर्णोऽहं ज्योतिरूपोस्म्यहं सदा। ॐ, ॐ, ॐ।

९ ॐ विज्ञान मात्र रूपोऽहं सच्चिदानन्द लक्षणः। ॐ, ॐ, ॐ।

१० ॐ परब्रह्म स्वरूपोऽहं परमानन्दमस्म्यहम्। ॐ, ॐ, ॐ।

११ ॐ केवलं ज्ञानरूपोऽहं केवलं चिन्मयोऽस्म्यहम्। ॐ, ॐ, ॐ।

१२ ॐ केवलं नित्यरूपोऽहं केवलं शाश्वतोऽस्म्यहम्। ॐ, ॐ, ॐ।

१३ ॐ सदा चैतन्य रूपोऽस्मि चिदानन्द मयोस्म्यहम्। ॐ, ॐ, ॐ।

१४ ॐ केवलाकार रूपोऽस्मि शुद्धरूपोऽस्म्यहंसदा। ॐ, ॐ, ॐ।

१५ ॐ नित्य स्वस्थ्य स्वरूपोऽस्मि नित्यानन्दोऽस्म्यहं सदा। ॐ, ॐ, ॐ।

(ख)

१ ब्रह्मसत्यं जगन्मिथ्या जीवो ब्रह्मैव नापरः। ॐ, ॐ, ॐ।

२ अहं ब्रह्माऽस्मि मंत्रोऽयं ज्ञानानन्दं प्रयच्छति। ॐ, ॐ, ॐ।

३ अहं शुद्धोऽस्मि बुद्धोऽस्मि नित्योस्मि प्रभुरस्म्यहम्। ॐ, ॐ, ॐ।

४ ॐ अहं सत्य स्वरूपोऽस्मि अहं चैतन्यमेव हि। ॐ, ॐ, ॐ।

५ ॐ वस्तुतत्व स्वरूपोऽहं सदा चिन्मात्र विग्रहः। ॐ, ॐ, ॐ।

६ ॐ अखण्डैकरस रूपोऽहं चिन्मात्रोऽस्म्यहं सदा। ॐ, ॐ, ॐ।

७ ॐ आदि चैतन्य मात्रोऽहमखंडैकरसोऽस्म्यहम्। ॐ, ॐ, ॐ।

८ ॐ चिन्मयोऽहं चिन्मात्रं नित्य शुद्धोऽस्म्यहं सदा। ॐ, ॐ, ॐ।

९ ॐ सच्चिदानन्द स्वरूपोऽहं अहं ब्रह्मास्म्यहं सदा। ॐ, ॐ, ॐ।

१० ॐ असंगोहं ब्रह्म मात्रोऽस्मि निराकारोऽस्म्यहं सदा। ॐ, ॐ, ॐ।

११ ॐ भूमानन्द स्वरूपोऽहं ह्यजरोऽस्म्यमरोस्म्यहम्। ॐ, ॐ, ॐ।

१२ ॐ केवलं केवलोऽहं हि केवलं केवलोऽस्म्यहम्। ॐ, ॐ, ॐ।

१३ केवलं ज्ञानरूपोऽहं केवलं परमोऽस्म्यहम्। ॐ, ॐ, ॐ।

१४ केवलं शान्तरूपोऽहं केवलं चिन्मयोऽस्म्यहम्। ॐ, ॐ, ॐ।

१५ केवलं नित्यरूपोऽहं केवलं शाश्वतोऽस्म्यहम्। ॐ, ॐ, ॐ।

(ग)

१ ॐ हंसः सोऽहं-सोऽहं हंसः। ॐ, ॐ, ॐ।

२ ॐ निर्मलोऽहं। ॐ, ॐ, ॐ।

६ ॐ परिपूर्णोऽहं। ॐ, ॐ, ॐ।

४ ॐ कूटस्थोऽहं। ॐ, ॐ, ॐ।

५ ॐ साक्षिस्वरूपोऽस्मि । ॐ, ॐ, ॐ ।
६ ॐ चैतन्योऽहं । ॐ, ॐ, ॐ ।
७ ॐ अहमात्माऽहं । ॐ, ॐ, ॐ ।
८ ॐ विमलोऽहं । ॐ, ॐ, ॐ ।
९ ॐ अमलोऽहं । ॐ, ॐ, ॐ ।
१० ॐ अद्वैतोऽहं । ॐ, ॐ, ॐ ।
११ ॐ असंगोऽहं । ॐ, ॐ, ॐ ।
१२ ॐ चिन्मात्रोऽहं । ॐ, ॐ, ॐ ।
१३ ॐ चैतन्योऽहं । ॐ, ॐ, ॐ ।
१४ ॐ शिवोऽहं । ॐ, ॐ, ॐ ।
१५ ॐ शिवकेवलोऽहं । ॐ, ॐ, ॐ ।
१६ ॐ परिपूर्णोऽहं । ॐ, ॐ, ॐ ।
१७ ॐ परमात्माऽहं । ॐ, ॐ, ॐ ।
१८ ॐ नित्यतृप्त-स्वरूपोऽहं । ॐ, ॐ, ॐ ।
१९ ॐ निष्कलोऽहं । ॐ, ॐ, ॐ ।
२० ॐ निर्गुणोऽहं । ॐ, ॐ, ॐ ।

(घ)

१ ॐ देहातीत स्वरूपोऽस्मि अहं शेषोऽहमेवहि । ॐ, ॐ, ॐ ।
२ ॐ इन्द्रियानावरूपोऽहं सर्वभाव स्वरूपकः । ॐ, ॐ, ॐ ।
३ ॐ पंचकोश व्यतिरिक्तोऽहं शाश्वतानन्द विग्रहः । ॐ, ॐ, ॐ, ।
४ ॐ अवस्थात्रय अतीतोऽहं साक्षिरूपोऽस्म्यहं सदा । ॐ, ॐ, ॐ ।

५ ॐ साक्षी तुरीय द्रष्टाऽहं सकलागम गोचरः ॐ, ॐ, ॐ।

६ ॐ तुरीयातीता स्वरूपोऽहं नित्योऽस्मि प्रभुरस्म्यहम्।
ॐ, ॐ, ॐ।

७ ॐ अकर्त्ताऽहं अभोक्ताऽहं असंगोऽहमस्मि अव्ययः।
ॐ, ॐ, ॐ।

८ ॐ आदि चैतन्य मात्रोऽहमखंडैक रसोऽस्म्यहम्।
ॐ, ॐ, ॐ।

९ ॐ बन्ध मुक्ति विहीनोऽहं शाश्वतानन्द विग्रहः।
ॐ, ॐ, ॐ।

१० ॐ सर्वत्र पूर्णरूपोऽहं भूमानन्द मयोऽस्म्यहम्।
ॐ, ॐ, ॐ।

११ ॐ एकमेवाद्वितीयं स्द्ब्रह्मैवाहं न संशयः। ॐ, ॐ, ॐ।

१२ ॐ अहं शुद्धोऽस्मि बुद्धोऽस्मि नित्योऽस्मि प्रभुरस्म्यहम्।
ॐ, ॐ, ॐ।

१३ ॐ, ॐकारार्थं स्वरूपोऽस्मि निष्कलंक मयोऽस्म्यहम्।
ॐ, ॐ, ॐ।

१४ ॐ चिदाकार स्वरूपोऽस्मि नाहमस्मि न सोऽस्म्यहम्।
ॐ, ॐ, ॐ।

१५ ॐ निरंशोऽस्मि निरायसो न मनो नेन्द्रियोऽस्म्यहम्।
ॐ, ॐ, ॐ।

उपर्युक्त मंत्रों पर ही ॐ का निर्गुण ध्यान वा अहंग्रहकी उपासना करनेवाले साधक उपर्युक्त किसी भी मंत्र समूहका ध्यान अपनी रुचि वा सुविधाके अनुकूल सहर्ष कर सकते हैं। निदान

किसी एक मंत्र वा महावाक्यको ही अपना मुख्य लक्ष्य बनाना होगा। और अन्तमें इस एकका भी लय स्वरूपमें ही करना होगा। तदुपरान्त ब्रह्माकार वृत्तिका विकास स्वयमेव ही होगा। यह ब्रह्मा-कार वृत्ति ही ब्रह्म वा 'स्वरूप' को आच्छादित करनेवाली अविद्या अथवा मूलाज्ञान को भी हर लेगी और साधक अपनी स्वरूप-स्थिति अथवा ब्रह्मसंस्थोंकी ब्राह्मीस्थितिमें आरूढ़ होकर स्वयं प्रकाश रूपसे ही प्रकाशित और गौरवान्वित होगा। और तब आप ब्रह्मविद्‌ब्रह्मैव भवतिके ब्रह्मात्मैक्यसे स्वयं ही ब्रह्ममय और ब्रह्म रूप ब्रह्म भी हो जायेंगे।

चतुर्थ परिच्छेद

ब्रह्माकार वृत्ति

ब्रह्म सत्-चित्-आनन्द (सच्चिदानन्द) स्वरूप है। वह सबकी महद्योनि है। हमारा रहना, घूमना, फिरना और चलना उसकी सत्ता पर ही निर्भर करता है। वही इस विश्व और वेदोंका अधिष्ठान और कारण रूप है। वह दृश्य रूप सभी विषयोंका अधिष्ठान और स्वरूप है। वह मन, बुद्धि, प्राण इन्द्रियोंको ज्योति और बल प्रदान करता है। वह मनमें संकल्प, विकल्प रूप हो उत्पन्न होनेवाली सभी स्फुरणाओं और प्रवृत्तियोंका कूटस्थ साथी है।

मन ही ब्रह्मकी शक्ति है। संस्कृत शब्द 'अन्तःकरण' का मुख्यार्थ भीतरी शक्ति है। यह मनका ही अपर रूप है। दोनोंका प्रयोग प्रायः एक ही अर्थ में होता है। इसका वृहत् सार्वजनिक रूप है। मन, चित्त, बुद्धि और अहंकार यह सभी अन्तःकरणके ही अन्तर्गत आ जाते हैं। वृत्ति स्फुरणा मात्र है। यह विचारधारा वा भावतरंग ही है। यह चित्त अथवा 'मानस'-सरोवरकी सतह पर उत्पन्न हुई विचार वा भावोंकी क्षीण आलोक रेखा वा लकीर है। मानस पटल पर सूक्ष्म प्राणकी गति ही वृत्तिका प्रत्यक्ष रूप धारण करती है। प्राणकी पूर्ण स्फूर्ति ही वृत्ति वा विचार और प्राणकी निम्नगति 'श्वास' है। मनसे असंख्य वृत्तियां प्रतिक्षण उत्पन्न होती रहती

हैं। मनकी एक 'किरण' मात्र ही नेत्रोंसे प्रकट होती है और जिस वस्तु विशेषकी ओर दौड़ती है, उसे ही तद्रूप होकर ग्रहण कर लेती है और पूर्ण रूपसे आच्छादित भी कर लेती है। सभी दृष्टिगोचर होनेवाली 'नाम रूप' वस्तुओं वा विषयोंको ढंक वा आवृत कर लेनेवाली वेदान्तकी 'तूलाविद्या' (रूप आवरण) को हटा देती है। इसे ही 'विषयाकार' वृत्ति कहते हैं। वृत्तिका काम ही आवरण-भंग करना है। घटके घट रूपको जिस आवरणने छिपा रखा था, उसको हटानेवाली वृत्ति ही घटका 'विषय' करानेवाली घटवृत्ति है और घटकी इस विषयाकार वृत्तिसे ही घट-घट रूपसे स्पष्ट देख पड़ता है और तब हम कहते हैं कि 'यह घट है'। वेदान्तमें दृष्टिका यह रूप है। आशा है पाठकोंको इतनेसे ही विषयाकार वृत्तिका परिचय वा स्पष्ट ज्ञान हो गया होगा। इन्द्रियजन्य भोगोंका ही नाम 'विषय' है। आकार आकृति वा रूपको कहते हैं। मन जिस विषयका जो रूप ग्रहण कर लेता है वह उसका 'विषयाकार' है।

अज्ञानकी अवस्थामें यह मूढ़ 'जीव' इस (अशुद्ध) संकल्प, विकल्पात्मक मनसे ही मैत्री कर लेता है और मनके साथ तद्रूप होकर मन जैसा ही बन जाता है, 'वृत्ति' और भाव-तरङ्गोंके साथ तदाकार वृत्ति धारण कर इस संसारके विषय भोगोंमें ही अनुरक्त हो जाता है और नित्यप्रति इन विषयोंको ही भोगता रहता है। मन, वृत्ति और इन्द्रियोंका साथ होते ही, वह बाइबिलके Forbidden (वर्जित) 'विषफल' को ही चखने लगता है और अपनेको 'काम' और 'कल्पनाओं'का अनुचर बनाता हुआ अपने विशुद्ध आत्म रूपसे च्युत हो 'जीव' का रूप धारण करता है। जन्म और मृत्युके आवा-

गमन रूप संसारचक्र पर आरूढ़ हो राग-द्वेष वा सुख-दुख रूप पहियों पर ही घूमता रहता है। इस प्रकार उसके विषयासक्त स्थूल मनमें दिनरात यह विषयाकार वृत्ति ही दौड़ लगाती रहती है। इस विषयाकार वृत्तिको ही निरन्तर आध्यात्मिक साधना और आत्म-विचारसे सात्विक ब्रह्माकारवृत्तिका रूप देना होगा। श्रुति भी कहती है—"गृहस्थः ब्रह्मनिष्ठो स्यात् तत्वज्ञानपरायणः"।

यह ब्रह्माकारवृत्ति क्या है? इसकी उत्पत्ति कहांसे हुई? इस ब्रह्माकारवृत्तिको जाननेका उपाय क्या है? ब्रह्माकारवृत्तिके चिन्ह वा लक्षण क्या हैं? इसकी क्रिया है? इसकी चेष्टा वा प्रवृत्ति क्या है? इसका अन्तिम परिणाम क्या है? हम इस ब्रह्माकारवृत्ति को किस प्रकार बढ़ा सकते हैं?

अब हम हृदयमें कौतूहलता, जिज्ञासा और खलबली उत्पन्न करनेवाले इन स्वाभाविक प्रश्नोंपर ही उचित विचार करेंगे।

यह ब्रह्माकारवृत्ति, सात्विक अन्तःकरणसे उत्पन्न हुई सात्त्विक वृत्तिका ही विकसित रूप है। जब मन काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, ईर्ष्या, द्वेष, छल, कपट, असहिष्णुता, ममता, अहंकृति, आसक्ति, घृणा, आलस्य, और अकर्मण्यता आदि दोषोंसे मुक्त होकर निर्मल हो जाता है तब अपना सात्त्विक रूप धारण कर लेता है।

मनके दोष तीन हैं—(१) मल (२) विक्षेप और (३) आवरण। मल इष्टदेवकी उपासनासे ही दूर होता है। इन्द्रियोंका दमन दम के अभ्याससे और मनका शमन वासना-त्यागके सहारे शमके अभ्याससे करना चाहिये। साधकको आत्मसाक्षात्कार वा मोक्षप्राप्तिके साधन-चतुष्टय रूप (१) विवेक (२) वैराग्य (३) शम, दम, तितीक्षा, उप-

रति, श्रद्धा और समाधान रूप षट्संपति और (४) मुमुक्षुत्वसे नित्ययुक्त होना चाहिये।

इन चार गुणोंसे विभूषित हो जानेपर ही साधकको सद्गुरु का आश्रय ग्रहण करना चाहिये। वह तत्वदर्शी गुरु उचित उपदेश देगा; उसे गुरुमुखसे श्रुति वाक्योंका श्रवण करना चाहिये। गुरु उसे उपनिषदोंके 'अद्वैत ब्रह्म' और उसके गूढ़ रहस्योंकी व्याख्या दृष्टान्त और युक्तियोंसे सुनायेगा।

गीता—"तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्व दर्शिनः॥

वेदान्तमें इसका नाम "श्रवण" है। उपरान्त सद्गुरु शिष्यको- 'तत्वमसि' 'अहं ब्रह्माऽस्मि', 'अयमात्मा ब्रह्म' 'प्रज्ञानमानन्दं ब्रह्म' आदि महावाक्योंका लक्ष्यार्थ बताकर, नेति-नेति-विधिसे पञ्चकोश, शरीर, प्राण, मन बुद्धि और कारण शरीरका मिथ्यात्व सिद्ध करेगा और आत्मतत्वका निरूपण करता हुआ बतायेगा कि हे शिष्य! तुम अब तक अविद्याके अन्धकारमें पड़े हुए थे, तुम स्थूल शरीर नहीं हो। तुम प्राण नहीं हो। तुम मन नहीं हो। तुम बुद्धि नहीं हो। तुम आनन्दमयकोश नहीं हो। तुम पञ्चकोश व्यतिरिक्त हो। तुम जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति तीन अवस्थाओंके साक्षी हो। तुम नित्य, शुद्ध-बुद्ध स्वतन्त्र, सर्वव्यापी, परिपूर्ण आत्मतत्त्व हो। तुम सच्चिदानन्द ब्रह्म हो। तुम वही हो। 'तत्त्वमसि'—वह तुम हो। तुम ब्रह्म हो।

उपरान्त साधक निरन्तर 'अहं ब्रह्माऽस्मि' आदि महावाक्योंके उदात्त अद्वैत तत्त्वका ही चिन्तन करेगा। वेदान्तमें इसे ही 'मनन' कहते हैं। मननके अनन्तर वह 'अहं ब्रह्माऽस्मिरूप एक अद्वैत ब्रह्म-

तत्वका निदिध्यासन भी आरम्भ कर देगा। 'अहं ब्रह्माऽस्मि' के निदिध्यासनसे ही उसके हृदयमें 'ब्रह्माकारवृत्ति' का उदय होगा। श्रीमच्छङ्कराचार्यने अपने सुप्रसिद्ध 'आत्मबोध' ग्रन्थमें सात्विक अन्तःकरणसे ब्रह्माकार वृत्तिके बढ़ाने और पुष्ट करनेका निम्न उपाय बताया है।

"एवं निरन्तर कृत ब्रह्मैवाऽस्मीति वासना।
हरति अविद्या विक्षेपान् रोगानिव रसायनम्॥"

अर्थात्:—इस प्रकार निरन्तर मैं ही ब्रह्म हूं, 'मैं ब्रह्म हूं' (ब्रह्मैवाऽस्मीति)की (मानसिक) वासना मनके अविद्या जनित विक्षेपोंका अपहरण रोगोंको हरलेनेवाले रसायनकी तरह करती है। अब इसके बाद साधना आरम्भ होती है :—

"विविक्त देश आसीनो विरागो विजितेन्द्रियः।
भावयेदेकतात्मानं तमनन्तं अनन्यधीः॥"

अर्थात्:—वह 'अनन्यधीः' साधक किसी एकान्त देशमें बैठा हुआ वीतराग और जितेन्द्रिय होकर एकमात्र उस अनन्त (आत्मा) का ही चिन्तन एकात्म-भाव से करे।

निदिध्यासनके अभ्यासके लिये एकान्तसेवन अनिवार्य है। यही साधनका ब्रह्म-कवच वा अक्षय तूणीर है। आप अपनी एकान्त कोठरी वा कमरेको ही सघन वनका रूप दे सकते हैं और यदि परिस्थिति अनुकूल हो तो एकान्त सेवनके लिये हृषीकेश, उत्तरकाशी आदि हिमालय प्रदेशमें ही कमसे कम ३ वर्ष रहना अत्यन्त श्रेयस्कर होगा। निरन्तर 'अहं ब्रह्माऽस्मि' की तैलधारावत् अविच्छिन्न, अद्वैत, ब्रह्मभावना ही सच्चा निदिध्यासन है। 'अहंब्रह्माऽस्मि' की यह

अद्वैतभावना ही ब्रह्माकारवृत्तिकी जननी है। 'अहं ब्रह्मास्मि' महावाक्यजन्य सात्विक अन्तःकरणका परिणाम ही ब्रह्माकारवृत्ति है।

साधन-चतुष्टय-सम्पन्न और 'अहं ब्रह्माऽस्मि' महावाक्यके वास्तविक तत्वको जाननेवाला और संसारकी सभी विषयाकार वृत्तियों या विषयोंसे विरत होकर निरन्तर एकान्त-सेवन करनेवाला मुमुक्षु ही अहं ब्रह्माऽस्मि' महावाक्यके निदिध्यासनसे अपनी ब्रह्माकारवृत्तिको पुष्ट कर सकता है। ब्रह्माकार वृत्तिके विकसित होते ही विषयाकार वृत्तियां स्वतः ही नष्ट हो जाती हैं।

साधनाके आरम्भमें ब्रह्माकार वृत्ति और विषयाकारवृत्ति में परस्पर घोर संघर्ष होता है। ब्रह्माकारवृत्तिका उदय होते ही विषयाकारवृत्ति इसे समूल नष्ट करनेवाला प्रबल उद्योग करती है। विविध भाव और तरङ्ग रूप विषयाकार वृत्तियां 'आधिपत्य' ग्रहण करनेका पूर्ण प्रयत्न करती हैं। वे अपना घर भी कर लेती हैं और साधकको ब्रह्माकारवृत्तिसे विषयाकारवृत्तिमें घसीट लाती हैं परन्तु निरन्तर निदिध्यासनके बलसे ही साधक निदान ब्रह्माकारवृत्तिमें स्थित होता है। कुछ कालतक निरन्तर निदिध्यासनके प्रबल उद्योगसे ही ब्रह्माकारवृत्तिको अक्षुण्ण बनाये रखता है तब उसके सभी 'संकल्प' नष्ट होकर शान्त हो जाते हैं।

ब्रह्माकारवृत्तिके उदय होते ही साधकके हृदयमें ब्रह्मकी अल्प झांकी (दर्शन) होने लगती है। सुदीर्घ काल तक ब्रह्माकारवृत्तिको अविच्छिन्न भावसे अक्षुण्ण बनाये रखना अत्यन्त कठिन और दुस्साध्य भी है।

सदैव चिरकाल तक अखण्ड तैलधारावत् ब्रह्माकारवृत्तिमें स्थित

हो जाना नितान्त कठिन है। सुप्रसिद्ध स्वामी विशुद्धानन्दजी महाराज (काशी) को भी ब्रह्मकी अल्प झांकी ही हुई थी। ब्रह्माकारवृत्तिकी स्थिति श्रीशङ्कर और दत्तात्रेयकी ही थी। ब्रह्माकारवृत्तिकी स्वरूप स्थिति ही ब्रह्मसंस्थोंकी ब्राह्मीस्थिति वा स्वरूपस्थितिके रूपमें परिणत हो जाती है। यह 'भूमा' की ही आत्यन्तिक स्थिति है। ब्रह्माकारवृत्तिकी स्थितिमें वासनाओंका आत्यन्तिक क्षय हो जानेसे ब्रह्मकी यह अल्प झांकी भी मनुष्यको मृत्यु संसारसे निश्चय ही तार देती है। ब्रह्माकारवृत्तिका सम्यक् ज्ञान योगवाशिष्ठ निर्वाण प्रकरणके अध्ययनसे हो सकता है।

अखण्डाकारवृत्ति, तदाकारवृत्ति, आत्माकारवृत्ति, स्वरूपाकारवृत्ति, और अखण्ड-एक-रस (अखण्डैकरस) वृत्ति आदि ब्रह्माकारवृत्तिके ही पर्यायवाची शब्द हैं।

अद्वैतभावना रूप समाधि 'ब्रह्माकार-वृत्ति सहित' और अद्वैतावस्थानरूप समाधि ब्रह्माकारवृत्तिरहित होती है।

भृङ्गीभय ते भृङ्ग, होय वह कीट महाजड़।
कृष्णप्रेम ते कृष्ण होय नहिं यह अचरज बड़॥

इस भ्रमरकीट न्यायसे मन जिसका ध्यान वा चिन्तन करता है, उसका रूप (तद्रूप) ही ग्रहण करता है। 'यो यच्छ्रद्धः स एव सः'— As you think so you become अतएव निरन्तर ब्रह्मचिन्तनके ही एकाधिक ध्यानसे साधकका अन्तःकरणरूपनिर्मल मन भी ब्रह्मरूप-ब्रह्म-ही हो जाता है। ब्रह्मविद्ब्रह्मैवभवति। इसे ही वृत्तितदाकार वा तदाकारवृत्ति कहते हैं।

जिस प्रकार मैले पानीमें कतकफलकी धूलि, झाग वा पिठ्ठी

फैंक देनेपर यह जलका कुल मल अपने साथ जलके नीचे ले जाती है और स्वयं भी नीचे जाकर बैठ जाती है उसी प्रकार यह ब्रह्माकारवृत्ति भी आत्मा वा निजबोधरूप स्वरूपको आच्छादित कर लेने वाले मूलाज्ञान वा मूलाविद्याका नाश करती है और इसके साथ ही यह दृश्य जगत् (विश्व) भी ब्रह्ममें ही लीन हो जाता है। ब्रह्मका यह आवरण हटाना ही ब्रह्माकारवृत्तिका मुख्य काम है और तब आवरणके हट जानेपर श्मशानभूमिमें मृतदेह वा चिताको क्षार-क्षार कर जलानेवाली और अन्तमें चिताके साथ ही राख हो जानेवाली बांसकी लम्बी छड़ीकी तरह स्वयं नष्ट हो जाती है।

जब हम किसी भी वस्तु-विशेष को विषयाकार करते वा विषय रूपसे देखते हैं उस समय विषय करनेवाला यह विषयाकारवृत्ति तूलाविद्यारूप उस वस्तु वा विषय-विशेष को ढकने अथवा आच्छादित करनेवाले आवरणको नष्ट कर देती है और हमारा आभास चैतन्य वा वृत्तिसहित चैतन्य ही उस वस्तु-विशेष को 'नयनगोचर' करा देता है। एक ब्रह्माकारवृत्ति सहित चैतन्य भी है। कल्पना करें कि एक अंधेरी कोठरीमें पड़ी हुई पेटी वा सन्दूकचीमें एक छोटी सी पोथी रखी हुई है। पेटी शीशे (काँच) की है। यदि वह पेटी वा सन्दूकची अन्धेरेमें देख नहीं पड़े तो पोथी किस प्रकार मिलेगी ? आपको पेटीके देखनेके लिये एक दिया, चिराग वा लैम्प (बत्ती) चाहिये। मान लीजिये कि पोथीको पढ़नेके निमित्त एक बिजलीबत्ती उस पेटीमें लगी हुई है। अथवा पोथीकी जगह आधुनिक युगकी रेडियमवाली घड़ी की ही कल्पना करलें। यदि वह शीशेकी पेटी, अचानक टूट जाय तो बिजलीबत्ती (लैम्प) वा घड़ी,

बिना किसी दीप या बाहरकी रोशनीके ही, चमकने लगेगी। बिजलीबत्ती या घड़ीको देखनेके लिये किसी भी बाहरी प्रकाशकी आवश्यकता नहीं रह जाती। वह स्वयंज्योति वा स्वयं-प्रकाश है। इसी प्रकार जब ब्रह्माकारवृत्ति ब्रह्मको आच्छादित करनेवाले आवरणको दूर कर देती है उस समय 'ज्योतिर्ज्योतिः, स्वयं ज्योतिः, स्वयं-प्रकाश ज्योतिर्मय निरंजन ब्रह्म भी अपने प्रकाशसे ही स्वयं प्रकाशित हो जाता है। स्वयं-प्रकाश ब्रह्मको प्रकाशित करनेके लिये ब्रह्माकारवृत्तिके साथ रहनेवाले उपर्युक्त ब्रह्माकारवृत्ति सहित चैतन्यकी कोई आवश्यकता नहीं रह जाती है पर किसी वस्तु विशेषके प्रसंगमें, उपर्युक्त आभास-चैतन्य वा वृत्ति-सहित-चैतन्य का होना तो अनिवार्य है। इन दोनोंमें 'वृत्ति' सहित-चैतन्य और ब्रह्माकारवृत्ति सहित चैतन्यका ही भेद है।

'ब्रह्माकारवृत्ति' साधन है, साध्य नहीं। ब्रह्म या स्वरूपमें वृत्ति-ज्ञान नहीं है। ब्रह्ममें वृत्तियोंका अभाव है। ब्रह्ममें तो एकमात्र 'स्वरूपज्ञान' ही अवस्थित है। ब्रह्म स्वयं 'चिद्घन' वा चिद्घनानन्द' है। समस्त वृत्तियोंका नाश 'ब्रह्मज्ञान' के पूर्व ही हो जाना चाहिये। निःशेष वा अशेष रूपसे बची हुई अन्तिम शेष वृत्ति भी ब्रह्ममें लीन हो जायेगी।

आप यह पूछ सकते हैं कि जब ब्रह्म निराकार है, ब्रह्मका कोई आकार ही नहीं तो मन वा अन्तःकरणकी उपर्युक्त सात्विकवृत्तिको ब्रह्माकारवृत्तिके नामसे पुकारते ही क्यों है? इसे ब्रह्माकारवृत्ति ही क्यों कहते हैं? उत्तरमें निवेदन यह है कि जब समस्त अनात्म-विषयाकार वृत्तियां नष्ट हो जाती हैं, तब ब्रह्माकारवृत्तिका उदय

होता है और यह ब्रह्माकारवृत्ति ही ब्रह्म प्राप्तिका हेतु बन जाती है। अतएव इसका यह 'ब्रह्माकारवृत्ति' नाम अत्यन्त सार्थक है। तृतीय परिच्छेदमें दिये हुए ध्यानके सूत्ररूप मंत्रोंके सुदृढ़ अभ्याससे साधकोंको 'ब्रह्माकारवृत्ति' की प्राप्तिमें विशेष सहायता मिलेगी।

कोटिशः धन्यवाद है इस ब्रह्माकारवृत्तिको जो मनुष्यजीवनके मुख्य 'लक्ष्य' की प्राप्तिमें इतनी सहायता पहुंचाती है और 'जीव' को स्वरूपमें स्थित कर 'ब्रह्म' ही बना देती है। बलिहारी है 'तत्त्वमसि' और अहं ब्रह्मास्मि' आदि महावाक्योंको भी जिनके प्राप्त कर लेनेपर और कुछ प्राप्त करना शेष नहीं रह जाता जिनके लाभसे और अधिक कोई लाभ नहीं है, जिस ब्रह्मानन्दसे अधिक और कोई 'आनन्द' नहीं है जिस 'ब्रह्मज्ञान' से अधिक और कोई 'ज्ञान' नहीं है, वह सच्चिदानन्दरूप आपकी 'आत्मा' ब्रह्म. 'स्वरूप' वा स्वस्वरूप 'ब्रह्म' ही है। तत्त्वतः वा वस्तुतः आप 'ब्रह्म' ही हैं। आप स्वयं सच्चिदानन्द स्वरूप हैं। 'ॐ सच्चिदानन्द स्वरूपोऽहं सोऽहं 'ब्रह्म' ॐ।' आप इस ब्रह्माकारवृत्तिको ही पुष्ट करें और परम स्वतन्त्र (परमात्मारूप परब्रह्म ही) बन जावेंगे।

'साधन चतुष्टय' पूर्वक ॐ के अखंडैकरस जप और ध्यानसे, अपने निर्मल मनरूप सात्विक अन्तःकरणके सुमधुर और सुन्दर परिणामस्वरूप ब्रह्माकारवृत्तिका सुदृढ़ अभ्यास करें। आप सभी ॐ के ध्यानसे उस नित्यानन्दकी अद्वैत स्थिति प्राप्त कर सकते हैं। आप सभी अविच्छिन्न तैलधारावत्, दीर्घघंटा निनादवत् ॐ की अखंड 'ब्रह्मभावना' से ही मन वाणीके परे, वचन अगोचर 'बुद्धिपर' सच्चिदानन्दस्वरूप' ब्रह्ममें लीन हो जायें। [illegible] शुभकामना है आपमें [illegible] 'शिव' [illegible]